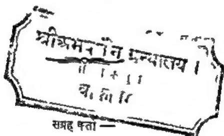
श्री सहजानन्द शास्त्रमाला

सुबोध-पत्रावली

(१६)

(पूज्य श्री १०५ क्षु० गणेशप्रसाद जी वर्णी महाराज
व पूज्य श्री १०५ क्षु० मनोहर जी वर्णी 'सहजानन्द'
महाराज की ओर से लिखे गये पत्रों
का संग्रह)



संग्रह कर्ता —

मूलचन्द जैन
जैन स्ट्रीट, मुजफ्फरनगर

प्रथम संस्करण
प्रति
२२००

वी० नि० सं० २४८०

मूल्य
१० आना

श्री सहजानन्द शास्त्रमाला के प्रवर्तकों की शुभनामावलि निम्न प्रकार है —

१ *	श्रीमान् ला० महावीर प्रसाद जी जैन बैंकर्स सदर मेरठ	१००१)
२ *	,, ,, मित्रसैन जी नाहर सिंह जी जैन मुजफ्फरनगर	१०१)
३ *	,, ,, प्रेमचन्द जी ओमप्रकाश जी जैन प्रेमपुरी मेरठ	१०१)
४ *	,, ,, सलेखचन्द जी लालचन्द जी मुजफ्फरनगर	११०१)
५	,, ,, शीतलप्रसाद जी जैन मेरठ सदर	१००१)
६ *	,, ,, कृष्णचन्द जी जैन रईस देहरादून	११०१)
७ *	,, ,, दीपचन्द जी जैन रईस देहरादून	१००१)
८ *	,, ,, वारूमल जी प्रेमचन्द जी जैन मसूरी	११०१)
९ *	,, ,, बाबूराम जी मुरारीलाल जी जैन ज्वालापुर	१००१)
१०	,, ,, केवलराम जी उग्रसैन जी जगाधरी	१००)
११	,, ,, जिनेश्वरदास जी श्रीपाल जी जैन शिमला	१००१)
१२	,, ,, बनवारी लाल जी निरञ्जन लाल जी शिमला	१००१)
१३ *	,, ,, गेंदालाल जी दगड़ूसाह जी जैन सनावद	१००१)
१४	,, ,, बाबूराम जी अकलंक प्रसाद जी जैन रईस तिस्सा	१००१)
१५ *	,, ,, मुकुन्दलाल जी गुलशनराय जी जैन नईमण्डी मुजफ्फरनगर	१००१)
१६	,, ,, सुखवीर सिंह हेमचन्द जी सर्राफ बड़ौत	१००१)
१७	,, ,, सेठ मोहनलालजी ताराचन्दजी बड़जात्या जयपुर	१००१)
१८	,, ,, भगवीलाल जी कोडरमा	१००१)
१९	,, ,, कैलाशचन्द जी देहरादून	१००१)

नोट —उक्त महानुभाव संस्था के प्रवर्तक सदस्य हैं इनमें से जिन सज्जनों के पूरे रुपये कार्यालय में आ चुके हैं उनके नाम के पहले * यह चिन्ह अंकित है।

१

दो शब्द

सुबोध पत्रावली क्या है ?

सर्वप्रथम जब मुझे परमपूज्य श्री १०५ क्षुल्लक मनोहर जी वर्णी 'सहजानन्द' महाराज का पत्र प्राप्त हुआ तो उसे पढ़कर मुझे बड़ा शान्ति व सुखका अनुभव हुआ। मैंने विचार किया कि उनकी ओरसे आये हुए पत्र तो हमारे लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं यदि हम उन्हें संभालकर रखें और जब कोई अशान्ति उपस्थित हो या हम दुखी हों तो उनका एक बार पढ़नेमें उस दुःख की निवृत्ति काफी अंशों में हो जायगी। यही सोचकर मैंने विचार किया कि क्या ही अच्छा हो यदि उनकी ओरसे आये हुए पत्र व उनके गुरु आध्यात्मिक सन्त परमपूज्य श्री १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसाद जी वर्णी महाराज की ओरसे आये हुए पत्रोंका संग्रह करके पुस्तक के रूपमें छपवा दिए जावें तो उनका एक जगह संग्रह भी हो जायगा व बहुतोंको लाभ पहुंचाने में सफल होगा। इसी उद्देश्य को लेकर मैं इस कार्यमें जुटगया और जिन सज्जनोंसे भी सम्भव होसका पत्र मंगाकर इस पुस्तकमें संग्रह किया है।

मैं उन सभी सज्जनोंका बहुतही आभारी हूँ जिन्होंने मेरे लिखने पर मुझे पत्र भेज दिये। श्री चेतनलाल जी, श्री महेशचन्द जी टूंडरी आफीसर, श्री विमलप्रसाद जी, श्री जुगमन्दरदास जी, श्री सुमतप्रसाद जी M P, श्री लक्ष्मीचन्द जी, श्री रमेशचन्द जी मुजफ्फर नगर वाले, श्री रतनचन्द जी, श्री नेमचन्द जी, श्री जिनेश्वरदास जी सहारनपुरवाले, श्री हुकमचन्द जी सलावावाले, श्री शीतलप्रसाद जी शाहपुरवाले, श्री सर सेठ हुकमचन्द जी इन्दौर वाले, श्री मुखवीर सिंह जी हमरान्ना वकील वाले, श्री मंगलसैनजी मुबारिकपुर वाले, श्री ब्र० नीतानन्द जी, श्री ताराचन्द जी, श्री रतनलाल जी मेरठ वाले, श्री प्रेमचन्द जी मसूरी वाले आदि सब ही धन्यवादके पात्र हैं

जिन्होंने पत्र भेजकर मुझे इस कार्यमें सहयोग दिया। मैं उनका हृदयसे आभारी हूँ।

जिन्होंने पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसाद जी वर्णी महाराज व पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक मनोहर जी वर्णी 'सहजानन्द' महाराजके दर्शन किये हैं तथा उनका प्रवचन सुना है वह जानते हैं कि उनके दर्शनमात्रसे कितनी शांति प्राप्त होती है व प्रवचन सुनने से रोमाञ्च हो आता है। उन प्रवचनोंकी ही झलक व वही बड़ी उनसे भी अधिक इन पत्रों में आपको मिलेगा। इन्हें पढ़कर अवश्य ही शांतिका अनुभव होगा। विशेष घटनाओंके होनेपर लिखे गये पत्र तो बहुत ही आश्चर्यकारी प्रभावको लिये हुए हैं। पुत्र वियोगके समय लिखा गया पत्र, अग्निकांडके समय लिखा गया पत्र व बीमारीके समय लिखे गये पत्रोंके पढ़नेसे तो हम बहुत ही सान्त्वना मिलेगी व संसारकी असारता व भोगोंकी क्षण भंगुरता प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होगा। इसके अतिरिक्त इन पत्रोंमें बहुत ही गम्भीर आध्यात्मिक प्रश्नोंके उत्तर भी हैं जिनसे हम आध्यात्मिक ज्ञान व रुचि होगी।

पूज्य श्री १०५ क्षुल्लकद्वयको तो मैं क्या धन्यवाद दूं वह तो मेरे परम हितैषी पूज्य गुरुवर्य्य हैं, उन्हीं का यह सब कुछ है उनकी कृपा ही इस कार्यके सम्पन्न होनेमें विशेष कारण हुई। मैं श्री सहजानन्द शास्त्रमाला मेरठ का भी अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने यह पुस्तक अपनी ओरसे प्रकाशित करना स्वीकार कर लिया है।

अन्त में मेरी यही भावना है कि आप इस पुस्तक को अवश्य पढ़ें, आपको अतीव लाभ होगा। यदि कोई अज्ञानवश त्रुटि रह गई हो तो कृपया मुझे लिखदें ताकि अगले संस्करण में ठीक करदी जायें।

मूलचन्द जैन
मई, सन् १९५४ ई०
जैन स्ट्रीट, मुजफ्फरनगर।

किन प्रश्नों का उत्तर कौनसे पत्र में ?

भाग १

"कुछ विशेष पत्र"

भाग २

"कुछ विशेष पत्र"

सुबोध--पत्रावली

भाग १

(पूज्य श्री १०५ क्षु० गणेशप्रसाद जी वर्णी महाराज की ओर से लिखे गये पत्रों का सग्रह)

श्री युत महाशय १०५ क्षुल्लक मनोहर वर्णी इच्छाकार

पत्र आया समाचार जाने। हमारा स्वास्थ्य अवस्था के अनुकूल अच्छा है। पकवान हैं। हमको तो आपके उत्कर्ष से आनन्द है— हमारा उपदेश न कोई माने न हम देना चाहते हैं। हम स्वय अपनी आज्ञा नहीं मानते अन्य पर क्या आज्ञा करें— आप जहा तक बने चेतन परिग्रह से तटस्थ रहना। जितना परिग्रह जो त्यागेगा सुखी होगा। विशेष क्या लिखें? आप स्वय विज्ञ हैं। विज्ञ ही नहीं विवेकी हैं। जितने त्यागी हों सबको इच्छाकार।

सागर — आ० शु० चि०

जेठ वदि ८ स० २००८ — गणेशवर्णी

× × ×

श्री वर्णी मनोहर जी योग्य इच्छाकार

पत्र आया समाचार जाने। जिसमें आपका कल्याण हो वही करो— आप ज्ञानी हैं— किसी के द्वारा कुछ नहीं होता— हमारी दुर्बलता जिस दिन चली जावेगी अनायास कल्याण हो जावेगा— मेरी तो यह श्रद्धा है— जो दो द्रव्योंका परिणमन एकरूप नहीं होता। हा सजातीय द्रव्य में (१) स्कन्ध पर्याय अनेक पुद्गल

परमाणुओं की हो जाती है फिर भी (२) परमाणु का अन्य परमाणुओं के साथ तादात्म्य नहीं होता— तद्यपि व्यतिरेकाभावात् बद्धस्पृष्टत्वादि-व्यवहार में कोई बाधा नहीं— यदि इसको ही लोग तादात्म्य मानें तब कोई आपत्ति नहीं। यही जीव और पुद्गल की बद्धावस्था में तादात्म्य मान लें तब लोगों की इच्छा। किन्तु दो एक नहीं हो जाते— यदि ऐसा होता तब इसकी क्या आवश्यकता थी जिनवरुन गुण तुमिर जीव मजीवस्सहेउ अवगुणा— तथा जीवस्स हु कम्मेण सह परणामाहि होति रागादि इत्यादि बहुत कर्म अधिकार की गाथा देखो—

हमारी तो यह श्रद्धा है राग दूर करने की चेष्टा करना रागादि की निवृत्ति नहीं करता— रागमें जो कार्यहो उसमें हर्ष विषाद न करना ही उसके विनाश का कारण है।

आ० व० ७ सं० २००६ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

नोट — जितनी उपेक्षा करोगे उतनी शान्ति पाओगे। सुख शान्ति का लाभ परमेश्वर की देन नहीं उपेक्षा की देन है। परमात्मा में उपेक्षा करो— इसका यह अर्थ नहीं जो परम सम्बन्ध छोड़दो— छोड़ना बराकी बात नहीं, बनकी बात है यदि इस पर दृढ़ रहो— वासना तो और है करता कुछ और है इसे त्यागो— अब विशेष पत्र इन का कष्ट न करना विकल्प त्यागना अच्छा— हमको निज मानना अच्छा नहीं।

× × ×

श्री युत महाशय क्षुल्लक मनोहर जी योग्य इच्छाकार

क्या लिखूं— यही भावना होती है केवल अध्यात्म भा...

हैं वही आत्माका कल्याणपथप्रदा है ... एक

उसीका ध्यान करूं क्या कि आज ... नहीं

का आश्रय चाहना या किसी ... हीं

निचार हैं। अवस्था अनुकूल नहीं कोई साथी नहीं–यह धारणा माला एकत्व अन्यत्व भावना का पात्र नहीं – मेरी तो यह श्रद्धा है जो सम्यग्दृष्टि दर्शनविशुद्धि आदि भावनाओंको नहींचाहता हो जाती है— मेरा तो अन्तरंग में यह श्रद्धा है वह शुभोपयोग को नहीं चाहता हो जाना अन्य बात है, मुनिव्रत भी नहीं चाहता– यह तो कुछ नहीं चाहता क्या आप को लिखूं — क्या कि आप जो हैं मो मैं उसका विवेचन ही नहीं कर सकता — यह जानता [redacted] जो आपहीमें रमण करनवाले हैं। कुछ मोहके नशेमें लिखमारा तो मुझे कुछ उपदेश लिखिये — आप जो प्रतिदिन उपदेश करतेहो वही अपनी ओर लावो .उससे अधिक क्या लिखूं— तत्वमें मुझसे पूछिये तो इन गृहस्था का उचित यह है जो ये अब खोलुस होरें। जो ५० वर्षके होगये लड़का आदिसे पूर्ण हैं एकदम निवृत्ति मार्गमें पधिक बन। धन्य धन्य उनको जो ज्ञान देने में कुछ न मिलेगा — मिलना तो उस मार्ग में गमन करने में होगा— मेरा जन्म तो या ही गया अब कुछ उस मार्गकी सुवआई सा शक्ति निर्बल हूं परन्तु कुछ भयकी बात नहीं— आत्मद्रव्य तो नहीं है जो युवावस्था में थी— दृष्टि परिवर्तन की आवश्यकता है—आपका जिसमें कल्याण हो सो करो— और क्या लिखें—, परमार्थ से परोपकारी कोई नहीं। श्री जीवाराम जी को इच्छाकार।

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्री युत वर्णी जी क्षुल्लक मनोहर लाल जी योग्य इच्छाकार—

आप सानन्दसे हैं बांचकर प्रसन्नताहुई। हम चैत्र सुदी १४ तक यहीं रहेंगे और फिर भी ८ दिन और रहेंगे— आप निर्विकल्प रहो और आत्मशुद्धि करो— कोई शक्ति न तो आत्मीय कल्याण में साधक है और न बाधक है। हम स्वयं साधक बाधक

परिणाम द्वारा उसे मान लेते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि निमित्त कोई नहीं— अर्थात् मोक्ष भी जब होगा तब उस समय क्षेत्रादि भी तो होंगे उन्हें कौन निवारण कर सकता है? अत सानन्दस धर्म साधन करो और किसी से भय न करो— परिणाम मलीन न हो यही चेष्टा करो— हम क्या लिखें— स्वयं गलापाद म पड़े हैं। हमको तो इसकी प्रसन्नता होती है जो कोई शुद्धमागम रह।

चैत्र सुदि १० — आ० शु० चि०
सं० २००८ — गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय वर्णी मनोहरलाल जी साहब योग्य इच्छाकार—

पत्र आया— समाचार जाने— मेरा तो यह विश्वास है संसार में कोई किसी का नहीं यह तो सिद्धान्त है। साथ ही यह निश्चय है कोई किसीका उपकारी नहीं— इसका यह अर्थ नहीं जो मैंने आपका उपकार कियाहो— और न यह मानता हूं जो आप मेरा उपकार करेंगे— हां यह व्यवहार अवश्य होगा जो वर्णी जी को वर्णी मनोहर ने सम्यक सल्लेखना करायी— परन्तु मेरा तो यह कहना है जो आपने गुरुकुल की नींव डाली है उसे पूर्ण करिये— हमारी चिन्ता छोड़ो— हमारी सल्लेखना हमारे भवितव्य के अनुकूल हो ही जायेगी—अथवा आप लोगों के भव्य भावों से ही हमारा काम बन जावेगा— यहा पर जो ब्रह्मचारी मुन्नालाल जी हैं उनसे इच्छाकार तथा श्री जीवाराम जी से इच्छाकार— वहाकी समाजसे यथा योग्य— यहा जो हकीम जी हैं उनसे आशीर्वाद।

इटावा — आ० शु० चि०
प्र० आ० व० १२ सं० २००७ — गणेशवर्णी

× × ×

क्षुल्लक मनोहरलाल जी वर्णी योग्य इच्छाकार—

...ना गये अच्छा किया— मेरी सम्मति तो यह है यहा

गर्मी के १० दिन या १५ दिन बिताकर आपको मुजफ्फरनगर ही रहना चाहिए— वहां की जनता बहुत ही धर्मपिपासु है—तथा धर्म पिपासु के साथ २ उदार भी है— गुरुकुल की रक्षा होगी तब उससे ही होगी— सहारनपुर का तो है ही उनको तो उसपर सदा दृष्टि देना रहेगा ही—गुरुकुल से उदासीन रहना सर्वथा ही अनुचित है— अब आप मयनिकल छोड़ मुजफ्फरनगर आजाइये—हम तो १५० माल दूर हैं— इस वर्ष तो किसी ही प्रकार नहीं आ सकते—बीच में ही रहनेसे कुछ लाभ नहीं तथा अब हमारीशक्ति भी नहीं जो १ घटा भीड़ में शास्त्र पढ़ सकें— लोगों का प्रेम शास्त्र पढ़ने से है होना ही चाहिये— अगर शास्त्र न सुनाया जावे तब यह क्यों इतना कष्ट उठावें— मेरी तो यही धारणा है आजकल आदर्श मनुष्य तो विरला ही होगा— आदर्श और वक्ता यह तो अति कठिन है—मेरी धारणा है, मिथ्या भी हो सकती है— अस्तु अभी आपकी अवस्था इसके अनुरूप है। अब एक स्थानको लक्ष्यकरके उसका उपयोग करलो— उसपरान्त वो गुरुकुल आपकी अमरकीर्ति रहेगी। इसका यह अर्थ नहीं आपको इच्छा यश की हो परन्तु जनता तो यही कहेगी वर्णी मनोहर हमारे प्रान्त का उपकार कर गए—हमारा तो अब न उपकार में मन जाता है और न अनुपकार में ही जाता है। इसका यह अर्थ नहीं जो इससे परे हैं, शक्तिहीन से उपकारानुपकार कर नहीं सकते—अन्तरंग से तो कषाय अनुरूप परिणाम होते ही हैं।

प्र० आ० ब० १५ सं० २००७ आ० शु० चि०
गणेशप्रसाद वर्णी

× + ×

श्रीयुत वर्णी जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया— समाचार जाने— निरुद्देश्य बुलाना कोई तत्व नहीं रखता— निरुद्देश्य दिल्ली गये उसका कोई फल नहीं ऐसे ही

मुजफ्फरनगर बुलाकर क्या लाभ मिलेगा—यह बुद्धि म नहीं आता—केवल बाह्य धन्यवाद प्रणाली मे कृतकृत्य मान लेना मैं उचित नहीं मानता— अभी आप वहा पर हैं और आपकी शान्ति से वहा का वातावरण अच्छा है— हमको इसमे प्रसन्नता है किन्तु हमारे आने से विशेष क्या होगा यह हमारे ज्ञानमें जब तक न आवाय हम वहा आवें बुद्धि म नहीं आता— अन आप पञ्चमहाशयो से स्पष्ट कह दो यदि कोई विशेष कार्य हो तब हमको लिखिए जो हम सभावालो मे इ कार करने का प्रयत्न करं— अ यथा ग्रीष्म उष्णकाल म यात्रा करें यह उचित नहीं।

शास्त्र सुनतेजाओ चौबारह्ल उचर्ग्रहा है। बोलने जाना धन्य धन्य की झकार करते जाओ मैं तो इन बाह्य आडम्बरा मे ऊब गया हूँ। हम तो उसदिनसे अपने को मनुष्य मानेगे—जो पञ्चपरमेष्ठीका स्मरण भला ही न करे किन्तु उनने जो मार्ग बनाया है उस पर अमलकरे यही धर्म का मर्म है।

अत हमारेअत्र प्रयास नकरना। हम अब इन्द्रापूतर तरफ जावें जाने गे। वहा भी आ सकते हैं परन्तु आपकी प्रतिष्ठा धक्का नहीं चाहते।

जेठ वदि ६ स० २००६ — आ शु० चि०

गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— अपवाद मार्ग भी है परन्तु उत्सग निरपेक्ष नहीं— उत्सग भी है परन्तु वह भी अपवाद निरपेक्ष नहीं— यह कब और किस प्रकार होता है - इसका कोई नियम नहीं साधक के परिणामा क उपर निर्भर है— आपने लिखा मैं अगहन म आऊ गा— मुझे आपकामहवास मन्द रुच्ता है। इसमे विशेष क्या लिखू— मेरा वृद्ध शरीर चल नहीं सकता— ४ मील चलना

कठिन है अस्तु जहाँ तक बनेगा निर्वाह करूँगा— मेरा श्रीयुत नाथूराम जी से सस्नेह इच्छाकार कहना वह बहुत ही सज्जन व्यक्ति हैं।

बरुआसागर — आ० शु० चि०
वैशाख बदि ४ सं० २००८ — गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय वर्णी मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया— समाचार जाने—स्वास्थ्य बहुत ही बिगड़ गया था— १ पैर चलना कठिन था— अब अच्छा है आज ४० हाथ चले— ज्वर प्रतिदिन आता है— अब आशा है यह भी शान्त हो जावेगा— मैं तो आपके प्रति निरन्तर यही भावना भाता हूँ जो आपकी वैयावृत्त किसीसे न करनापड़े तथा ऐसी प्रवृत्ति शीघ्र ही हो जावे जो मा के स्तन न चूसने पड़े— आप विज्ञ हैं हमारी शल्य न करिये।

बा० जीवाराम जी से इच्छाकार तथा बा० मूलचन्द्र जी को इच्छाकार

माघ बदि १ — आ० शु० चि०
सं० २००६ — गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— मेरा तो यह विश्वास है पर के कल्याणमार्गका कर्तृत्व भाव भी मोक्षमार्ग का साधक नहीं— मोक्षमार्ग का साक्षादुपाय रागादि दोष निवृत्ति है—रागादिक की की अनुत्पत्ति ही सम्वर है—रागादि निवृत्ति तो प्राणीमात्रके होती है किन्तु रागादि की अनुत्पत्ति सम्यग्ज्ञानी ही के होता है। अभी तो हम बरुआसागर हैं— अब तो पथपान हैं न जाने कब भइ जाय— श्री जीवाराम जी से हमारा इच्छाकार कहना—

वाला है उसे व्यवहारनय कहते हैं। इसमें अनेक विकल्प हैं— अस्तु— निमित्त को न मानने वाले ही निमित्त से काम ले रहे हैं। यहां निमित्त को न मानने वालों की प्रचुरता है फिर आपको किस अर्थ ले गये कुछ समझ में नहीं आता—अस्तु फोकट चर्चा निमित्त की है— हमारा विचार अब कुछ दिन म एक स्थान पर ही रहने का है— अब के जहां चातुमास हुआ वहां ही रह जावेंगे यह दृढ़ निश्चय है, यहां से शाहपुर जावेंगे— मेरा तो यह विश्वास है जो यथार्थ निरूपण करनेवाला है वही सम्यक्त का निमित्त हो सकता है। सम्यक्त जिसके होगा उसके उसकी श्रद्धा होगी तभी तो होगा- विशेष क्या लिखें—

का० सु० १२ आ० शु० चि०
सं० २००६ गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी वर्णी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—आप अब विकल्प न करें और न यह चिन्ता कर जो सहारनपुर वाले द्रव्य न देवेंगे—हमारा तो विश्वास है न कोई देने वाला है और न कोई दिलाने वाला है और न कोई लेने वाला है— व्यर्थ ही संकल्प विकल्प के जाल से यह नृत्य हो रहा है—और जाने का विचार किया सो अति उत्तम है- आपको क्या लिखें यहां क्या करना किन्तु यह अवश्य ध्यान रखना जो निरपेक्ष रहना— इस शब्द का अर्थ व्यापक लेना—संसार के काम चलें चाहे न चलें स्वयं उसके कर्ता न बनना—

जेठ सुदि ६ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

महाशय श्री १०५ क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—आप स्वयं पटुज्ञानी हैं— किन्तु

जहा तक बने न्यैत्राश्र को न भूलना—रागाश भी राग ही है अत प्रत्येक समय का भी घघ करने वाला है— वैसे तो एक समय जो औत्यिक राग होगा वह जितना होगा बधक और विकारी ही होगा— मेरी भावना अब गिरिराज पर ही रहने की हो गयी, यह प्रान्त छोड़ दिया है—आप तो अब कुछ काल जबलपुर और सागर को भी देना चाहिये। मैं आदश नहीं करता किन्तु प्रान्त का ध्यान जब तक राग है रखना ही चाहिये— विशेष क्या लिखू — मैं वैसाख में जहा हूँगा आपको लिखू गा—मेरी तो वृद्धावस्था है—पकपान हूँ—

कटनी आ० शु० चि०
का० व० ६ १० स० २००६ गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहरलाल जी वर्णी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया—हमारी तो श्रद्धा यह है न हमारे द्वारा किसी का उपकार हुआ और न आपके द्वारा हमारा हुआ— निमित्त नैमित्तिक सम्बध का हम निषेध नहीं करते— हम क्या कोई नहीं निषध करसकता— बोलना और बात है। आपका हमारा अन्तरग से सम्बध है परन्तु यह भी एक कल्पना है—आपका बोध निर्मल है— अत जो आपका अन्तरङ्ग साक्षी देवे वही अगीकार करो— न तो हमारी बात मानो और न मित्रवर्ग की मानो— यदि हमसे पूछो तब न आचार्य की मानो और न साधु की मानो—हम क्या कहे—होता यही है परन्तु मोह की कल्पना म जो चाहे कहो— हमारा अब यही अभिप्राय है जो एक स्थान मे शान्ति से कालयापन करना यह भी एक मोह की कल्पना है--यदि आप हमारा अन्तरङ्ग से हित चाहते हो तब यह पत्र व्यवहार छोड़ो—दूसरी सम्मति यह है इन मित्रवर्गों को यही उपदेश दो जो त्यागमार्ग में आवें। केवल गल्पवाद से जल बिलोमन सदृश कुछ

तरह नहीं—मुनि महाराज का स्वरूप तो आगम में है उसी से सन्तोष करो—चरणानुयोग में क्या है ? सो पण्डित वर्ग जाने—वर्त्तव्यपथ में मुनि महाराज जाने—श्री जीवाराम जी योग्य इच्छाकार आप वृद्ध हैं, आप का लिखना मान्य है— हमको अब सन्तोष है जो आप क्षुल्लक जी के पास रहते हैं। आ० सु० १४ को प्रात काल ललितपुर पहुँचेंगे—

आसाढ़ सुदि ११ — आ० शु० चि०
सं० २००८ — गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—ज्ञान पानेका फल यही है जो स्वपरोपकार करना। मेरे यहा आने की अपेक्षा आप उसी प्रान्त में रह—आपके पास सम्यग्ज्ञान है और चारित्र भी है— हम तो कुछ उपकार नहीं कर सकते क्योंकि वृद्ध हैं—आप अभी तरुण हैं—सब कुछ कर सकते हो— हम का० सु० ३ को पपौरा जायेंगे।

ललितपुर — आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

महाराज श्री १०५ क्षुल्लक मनोहर लाल जी वर्णी योग्य इच्छाकार—

आपको मैं ज्ञानी और विरक्त मानता हूँ—मैं अपने को कुछ नहीं मानता—मैंने जिन बालकों को पढ़ाया था वे मुझे १० वर्ष पढ़ा सकते हैं—मैं उनको महान मानता हूँ। मैं तो कुछ जानता हूँ। मैं तो कुछ जानता ही नहीं और न इससे मुझे कुछ दुःख है। आपको यही सम्मति दूगा जो तुम्हें समझ कह उसको मानो पर की सुनी मत मानो— और शान्तभाव से कार्य करो—हमको गुरु मत मानो — अपनी निर्मल परिणति को ही अपना कल्याणार्ग में साथी मानो—रेल के यातायात में विकल्प मत करो जहा पर

विशेष लाभ समझा जावे न समझो मत आओ हम से आप का हित हुआ यह लिखना तुम्हारी कृतज्ञता है— यह भी भूषण है— किन्तु यान मर्यादित ही हितकर होती है। आत्मा ही गुरु है— जो निज काय में सम्मति दे करो—

आ० सु० १० | आ० शु० चि०
सं० २००१ | गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया— समाचार जाने—प्रसन्नता हुई—और आपका समागम मुझे इष्ट है—परन्तु आप जानते हैं मैं स्वप्न में भी गुरु नहीं बनना चाहता—परमार्थ से है भी नहीं— सब आत्माएं स्वतन्त्र हैं। अतः आप स्वयं स्वतन्त्र हैं—जिसमें आपको शान्ति मिले सो करें।

मा० सु० १ | आ० शु० चि०
सं० २००१ | गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय वर्णी मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया हमारा स्वास्थ्य अच्छा है इसकी कोई चिन्ता न करो— आप सब विकल्प त्यागो— कोई प्रसन्न हो या कोई अप्रसन्न हो अपनी आत्मा प्रसन्न रक्खो—आत्मीय परिणति ही कल्याण का प्रयोजक है— फिर आप तो जिनागम के मर्मज्ञ हैं इतनी आकुलता क्या रखते हो—यदि गुरुकुल चलाने की इच्छा है तब उस प्रान्त के जो विज्ञ पुरुष हैं उनके साथ परामर्श कर जो मार्ग निकले उस पर अमल करो— अन्यथा विकल्प छोड़ो।

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत १०५ महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— मुझे तो आनन्द इस बातका है जो आप अपने स्वरूप में ही रत रहते हैं। श्रीमान पं० वशीधर जी जो एकही व्यक्ति हैं जो पदार्थोंके अन्तस्तलको स्पर्श करता है? उनके विषय म क्या लिखू ? उनके सद्भाव में प्राय बहुत जीवों का कल्याण होगा हमारा इच्छाकार कहना— आपकी प्रतिभा ही तुम्हारे कल्याण म सहायक होगी अन्य के आश्रय की आवश्यकता नहीं— हम वर्णीयोग यार कहां जावेंगे निश्चय नहीं— जावेंगे अवश्य— हमने डालीपर बैठना अनुचित समझकर त्याग दिया है— पैरों म विशेष शक्ति नहीं— अत ३ मील या ४ मील चलेंगे— प्राय इसी प्रान्तमें जावेंगे— आषाढ़ मास तक ललितपुर पहुँचे या आपके प्रान्त में पहुचे असम्भव नहीं। परन्तु शक्ति पतनोन्मुख है।

का० व० ३ स० २००६ आ० शु० चि०

गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

अन्तरंग से निर्मल रहना चाहिये— पर के लिये उपसर्गों से आत्मा की क्षति नहीं। आत्मीय निर्मलता की त्रुटि से आत्मा की क्षति होती है। पर पर की प्रशंसा से आत्मा की कोई उत्कर्षता नहीं है— केवल स्वशुद्धि ही कल्याण का मार्ग है— हम तो आजतक अपनी दुर्बलता ही मे फँसे कोई फँसाने वाला नहीं— अत जहा तक बने परकृत उपद्रवों को उपद्रव न मानो जो मन म सक्लेशता होती है उसका मूल कारण मिटाओ— परमार्थ से यह भी औदयिक भाव है सुतरा नाशमान है— कोई भी कुछ नहीं— निर्विकल्प रहना ही अच्छा है।

आ० शु० चि०

गणेशवर्णी

श्रीयुत १०५ क्षुल्लक सहजानन्द जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया— आप सानन्द पहुँच गये— यह सर्व जीवानन्द की महिमा है— यह प्रसन्नता की कथा है जो आप का फोड़ा अच्छा हो गया— हमारा अच्छा हो रहा है— उदय की बलवत्ता मानना व्यर्थ है— यदि श्रद्धान में विपरीतता आवे तब मैं उसे उदय की बलवत्ता मानता हूँ— यों तो शारीरिक वेदना प्रतिदिन होती ही रहती है— आपके आने से मुझे बहुत प्रसन्नता हुई— मेरा धार्मिक पुरुषों से यह कहना है जो कल्याण का लाभ इष्ट है तब इन पर पदार्थों से मूर्च्छा त्यागो— कल्याण का सर्व से प्रचण्ड बाधक परममता है। जिसने इसे त्यागा उसने अनन्त संसार को मिटा दिया— मेरा सर्व आनन्द मूर्त्तियों से इच्छाकार कहना।

अगहन बदि १ सं० २००८ आ० शु० चिं०

गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहर लाल जी योग्य इच्छाकार—

आप स्वयं योग्य हैं— कल्याण का पथ आचरण कर रहे हैं— व्यर्थकी चिन्ता में कुछ लाभ नहीं— हम तो आप के सदा शुभ चिंतक ही नहीं शुद्ध चिन्तक हैं— श्री जीवाराम जी से इच्छाकार।

भाद्र बदि ११ सं० २००८ आ० शु० चिं०

गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— जिसमें आपको शान्ति मिले वह करो— मेरा तो यह विश्वास है जो भी कार्य किया जाता है शान्ति अर्थ किया जाता है तथा अपने ही हित के लिए किया जाता है। कार्य चाहे शुभ हो चाहे अशुभ हो भद्र मानुष वही है जो लोकेषणा से परे है। मैं तो रल आदि के विकल्प को अनुपादेय समझता हूँ—

जब आवश्यकता प्रतीत हुई बैठ गए, नहीं हुई नहीं बैठे— जगत कुछ कहे इसका विकल्प ही व्यर्थ है— मैं तो चरणानुयोग इतना ही मानता हूं जिससे संक्लेश परिणाम हो मत करो - प० जी से हमारी इच्छाकार— अनियोग्यतम व्यक्ति है।

आ० शु० चि
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहरलाल जी वर्णी योग्य इच्छाकार—

जहा पर विरुद्ध कारण का भण्डार न शान्ति रह प्रशसा तो हम है और जहा हा मे हा मिले वहा आत्मोत्कर्ष की वृद्धि नहीं होती— अस्तु विशेष क्या लिखें—आप सरज्ञ हैं— जिसम आपको शान्ति मिले सो करिये— हमारा तो जीवन या ही गया— शान्ति का स्वाद न आया परन्तु रुदन करने म क्या लाभ— श्रद्धा अटल रहनी चाहिये—चरणानुयोग के अनुसार आत्मा को बनाना कल्याणप्रद नहीं किन्तु हमारी प्रवृत्ति ऐसी हो जो उस देखकर अनुमान करें प्रत तो यह है— भोजनादि के त्याग स आत्महित नहीं, आत्महित तो अन्तरग निर्मल अभिप्राय से है श्री जीवानन्द जी को इच्छाकार कहना—

आ० सु० ६ स० २००६ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× ×

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

आपके २ पत्र मिले— मैंने उत्तर द दिया—आप मानन्द स धर्म साधन करते हैं मुझे आनन्द है। ससार म जिसने आत्मीय कल्याण को कर लिया यही महती महत्ता है— प्रशसा निन्दा ना कमजन्य विकार है— जो मोक्षमार्गी है वह दोनों से परे हैं— जहा पर सरदी बहुत पड़ती है—अत मैंने यही निश्चय किया जो २ मास

एक स्थान ही पर बिताऊ— आपभी मेरठ मुजफ्फरनगर आदि स्थानापर ही बिताइये— यहा आना अच्छा नहीं— फागुन मास म मैं आपको लिखूंगा— साथमे जो ब्रह्मचारी हों उनसे इच्छाकार— गृहस्थासे दर्शनविशुद्धि—

अगहन वदि ८ सं० २००६ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

आप सानन्द होंगे— हमारा फोड़ा अब अच्छा है— २ मास पूर्ण सतत प्रयत्न करनेपर उत्तम हुआ— यद्यपि हमारेमें उसकी योग्यता थी परन्तु कुछ कारण कूट भी थे— जिस समय डाक्टरने उसे चीरा उससमय सबके व्यापार पृथक् पृथक् थे फिरभी एक दूसरे का निमित्त था। हम अष्टमीतक आहार रहेंगे—

पौष वदि ४ स० २००८ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

"क्षमावणी पर गुरु शिष्य के पत्र युगल"

(अ) श्रीयुत १०५ क्षुल्लक मनोहरलाल जी योग्य इच्छाकार—

दशलक्षण पर्व सानन्दसे गया— मैंने आपका अपराध किया नहीं और न आपने मेरा किया, अत क्षमा मागना सर्वथा ही अनुचित है, हा यह अवश्य अपराध है जो मैं आपको और आप मुझको अपना हित् समझते हैं एतदर्थ ऐसा भावना भावो जो यह मान्यता समाप्त हो तथा इतने निःशक रहो जो हमारा न कोई सुधार कर्ता है न और न इसके विरुद्ध करनेवाला है— मेरातो यह विश्वास है जो सम्यग्दृष्टि श्रद्धासे तो केवलीसदृश है— चारित्र मोहकृत तरतमता का कोई लोप नहीं कर सकता— वह

परिपाटी से होती ही है— मेरा आपके साथ जो भी ब्रह्मचारी हों उनसे इच्छाकार कहना।

भाद्र सुदि १४ सं० २००६ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

(आ) श्रीमान् प्रातः स्मरणीय गुरुवर्य पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक वर्णी जी महोदय— सेवा में सविनय वंदना।

अपरंच आपका कृपा पत्र मिला— पढ़कर निर्मलता का अनुभव हुआ। महाराज जी! कल ही मैंने क्षमावणी समामें पत्र भेजा किन्तु इस बालकको यह ध्यान न रहा कि मेरे निमित्त गुरुजीको अनेक बार कष्ट हुए और तू क्षमा मांगने का 'क' भी भूल गया और इतनी क्षमावणी हुईं कभी भी ध्यान न रहा सो महाराजजी क्षमावणी के नाते अर्थात् रूढ़ि के अनुसार आप जैसे महान् से क्षमा मांगने की भावना विकल्प ही नहीं हुआ और कभी कुछ ध्यान हुआ तो साहस नहीं हुआ— कि इस दिन मैं क्षमा मांगने से पहिले जबर्दस्ती यह सिद्ध करूं कि आपको आकुलता उत्पन्न हुई। मेरे हृदयमें यह बात है कि आप प्रकृत्या क्षमाशील हैं, मुझे अपने आपको क्षमा करने की कमी है और जो आपने लिखा है यह मेरे कल्याणार्थ तत्वस्वरूप का दिग्दर्शन करानेकेलिये लिखा है इससे मेरे भावमें भलाई हुई— कभी कभी मेरे किसी के प्रति, व्यर्थ सताये जाने पर "यह मेरा अकारण विरोधक क्यों होगा" यह विचार हो जाया करता था परन्तु आपके उपदेशसे अब मेरे इस विचार से दूर रहने का प्रयत्न है तथा भावना करता हूं कि भविष्य में आपकी कृपा से ऐसा सहनशील रहूं कि कोई दुःखकरे करो अपनी चेष्टा से— सुखी होहु, "मेरा तो जो भवितव्य है सो अपने चतुष्टय से हो रहा" इस निर्णीति के अनुसार अपने स्वात्मानुभव

के योग्य रहने रूप मार्ग में व्यर्थ विकल्प के फंदक न विछाइए। श्री ब्र० सीताराम जी आदि सबको आपकी वंदना पहुंचे। आपके आदर्शोपदेशाशीर्वादात्मक पत्र का लाभ मुझे निज मार्ग पर चलने में विशेष सहायक निमित्त होता है।

आश्विन वदी ३ सं० २००६ आपका
विनम्र सेवक अकिंचित्कर
बालक मनोहर

× × ×

"पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक मनोहर जी वर्णी की जयन्तिके अवसरपर उनके प्रातःस्मरणीय गुरु जी के पत्र"

(अ) मुजफ्फर नगर समाज को—

सर्वसमाज योग्य कल्याणभागी हो— जिस संसार भीरु आसन्न भव्यकी जयन्ती मना रहे हो वह कल्याण मार्गका प्रकाशक हो यही हमारी भावना है— यही कहना है ऐसे सुअवसर पर यदि कुछ चिरस्थायी आत्मीय उपकार करनेकी अभिलाषा है तब परकीय पदार्थों से ममता त्यागो साथ ही ऐसा स्थायी कार्य करो जो आप लोगों की स्थायी कीर्ति रहे— जिन पर पदार्थों में चिरकाल से उलझ रहेहो उन्हें त्यागो— हमारी तो यह भावना है जो मन्दिर जाकर भगवान से यह प्रार्थना करो हे भगवान् हमे ऐसी सुमति दो जो फिर मन्दिर न आना पड़े— दान देकर भी यही भावना भाओ फिर दान न देना पड़े— विशेष क्या लिखूं— एक गुरुकुलसंस्था आपकी चिरजीवी हो जिसमें आगम का प्रसार है— यदि वहां पर पं० हुकमचन्द आदि हों तब हमारी क्या कहें कहना—

इटावा आ०
७—११—४०

× ×

(आ) मेरठ समाज को — (ब्र० जीवाराम जी द्वारा)

श्रीयुत ब्र० जीवाराम जी योग्य इच्छाकार—

श्रीयुत क्षुल्लक मनोहर जी मनोहर ही हैं— मैं यह भावना भाता हूँ जो यह व्यक्ति सानन्दसे जीवन बिताकर स्वपरोपकार करें। यह बहुत प्रतिभाशाली व्यक्ति है। इसकी धारणा शक्ति बहुत ही उत्तम है। यह एक बार ही में धारणा कर लेता है। अब यह अष्टसहस्री प्रमयकमलमार्तण्ड उ चकाण्ड कर्मकाण्ड को पन्ना था एक घण्टा में याद करलेता था। वर्त्तमानमें भी अपने पदकी रक्षा करते समययापन करता है— आपने इनकी जयन्ती कर उत्तम कार्य किया। सच्ची भक्ति तो यह है जो इनके नामकी छात्रवृत्ति देकर २ छात्र हस्तनापुर गुरुकुल में पढ़ाओ या किसी बड़े विद्यालय में पढ़ाओ— यह हमको मानता है इससे हम इनकी क्या प्रशंसा करें- हमसे पूछो तो यह निकट भव्य है। इसका नाम तो परमेष्ठी मन्त्र में लिया जावेगा। विशेष क्या लिखूं—

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

(इ) इन्दौर समाज को—

श्री १०५ क्षुल्लक मनोहरलाल जी की जयन्ती मङ्गलमननी हो— प्रथम तो यह विशिष्ट ज्ञानी है— ज्ञान के साथ चारित्रवान भी हैं- साथ ही वक्ता भी उत्तम है—ऐसे मानवकी जयन्ती किसको मंगलकारक न होगी—यह मनुष्य दीर्घजीवी रहे यह मेरी भावना है— अन्तरंग से यह कामना मेरी है जो हे प्रभो ! तर ज्ञान में ऐसा जीव दिगम्बर मुद्रा का धारी हो जिसमें धर्म की प्रभावना विशेष हो।

चारित्रकी महिमा आगम है—अभी इस समय इसका समागम प्राय नहीं देखा जाता था—इस त्रुटि को आपने पूर्ण की, इसकी मुझे क्या जनतामात्र को प्रसन्नता है। आप ज्ञानचारित्र के साथ वक्तृत्व गुण से भी पुष्ट हैं—यह सोने में सुगन्ध गुण के सदृश है—इतना ही नहीं आप सरलस्वभावके हैं आप रत्नत्रय जीवी हों यह मेरा आशीर्वाद है।

सरल स्वभाव के साथ आप कृतज्ञ भी हैं।

मेरी आभ्यन्तर भावना है जो आपका जीवन ज्ञान और चारित्र के समागम में ही पूर्ण हो आपका जैसा निर्मल ज्ञान है वैसा ही निर्मल चारित्र हो— इस क्षुल्लकवृत्ति का अन्त हो और साक्षात् मोक्ष मार्ग का साधक दिगम्बरपदका लाभहो। आदम सबमें महान् गुण कृतज्ञता है जो कि मानवताकी जननी है। मेरी तो यह सम्मति है जो यही मनुष्य ससार के बन्धनोंको काट सकता है जो अपनी ओर देखता है। प्राय मनुष्य पर के विषय की चिन्ता करते देखे जाते हैं। यह मोह का जाल है— परमार्थ से कुछ नहीं।

येन दृष्टं परंब्रह्म सोऽहं ब्रह्मेति चिन्तयन्।
किं चिन्तयति निश्चिन्तो द्वितीयं यो न पश्यति॥

मेरा तो यह श्रद्धा है पुण्य से या उसके फल में शान्ति लाभ नहीं।

अलमर्थेन कामेन सुकृतेनापि कर्मणा।
एभ्यः संसारकान्तार न विश्रान्तमभून्मनः॥

कारण है जो सेठ को भी एकान्तवास करना ही पड़ा— ससार में सबमें महान् पुरुष तीर्थंकरों का ही यह मर्म त्यागना ही पड़ा। शायद जैसे थे वैसे हो गये।

का० ब० ४,स० २००६

आ शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत सकल पञ्चान महाशय मुजफ्फरनगर योग्यदर्शन विशुद्धि—

आप लोग मानन्दसे होंगे—वर्णी जी सानन्दसे पहुँचे होंगे। मेरी तो यह भावना है जो आप महानुभावोंको उनके द्वारा धर्म लाभ हो— मैं तो इतना वृद्ध और दुर्बल हो गया हूं जो अब आप महानुभावोंको कुछ भी लाभ नहीं पहुंचा सकता फिर भी भावना आप लोगोंके कल्याण की सतत रहती है— मेरा वर्णी जी से कहना है जो आप उसी प्रान्त में रहें और अधिक समय मुजफ्फरनगर मेरठ आदि में रहें। वस्तुतस्तु कल्याण का मार्ग प्रत्येक में है। हम लोग अनादि बन्धनमें पराधीन होरहे हैं और आत्मीय शक्ति की हान मान रहे हैं— यह हीनता ही हमको दुःख की खानि है, अब पराधीनता छोड़ शूर बनिए—फिर न तो मेरी आवश्यकता होगी और न वर्णी की— अभी हमारी कथा छोड़िए भगवान की भी आवश्यकता छूट जावेगी—स्वयं भगवान हो जावेंगे—

१४ दिन बाद सोनागिरि पहुँचेंगे—

ईसरी   आ० शु० चि०
फा० व० ७ सं० २००७   गणेशवर्णी

× × ×

श्री ब्रह्मचारी जी (ब्र० जीवाराम जी) इच्छाकार—

संसार की गति विचित्र है—यह सर्व कहते हैं। अपनेको इससे पृथक् समझते हैं यही आश्चर्य है। जिस दिन अपनी दुर्बलता का बोध हो जावेगा यह कल्पना विलय हो जावेगी।

मुरार   आ० शु० चि०
२२—१—५१   गणेशवर्णी

× × ×

श्री ब्रह्मचारी जी (ब्र० जीवाराम जी) इच्छाकार—

सानन्दसे काल यापन यही करना। आपत्तियां तो पर्याय में

आवेंगी जावेंगी सहन करना। अशान्ति न आवे यहा कर सकते हैं।

इटावा — आ० शु० चि०
८—१—५१ — गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय ला० जिनेश्वर दास जी योग्य इच्छाकार—

आपका पत्र आया था—मेरा तो यह विश्वास है ससार कोई बाह्यवस्तु नहीं और न मोक्ष कोई बाह्यपदार्थ है। आत्मा ही ससार और मोक्ष है— आत्मा ही निर्मल और समल परिणामों से जब युक्त होता है तब ही यह व्यवस्था हो जाती है—आप जहा तक बने स्वात्मपरिणतिके निर्मल करनेकी निरन्तरचेष्टा करिए और यहा वहा जाने मे कोई तत्व नहीं आप जानतेहैं किसी की परिणति किसी से नहीं मिलती और न मिलेगी और न मिली थी। अत पराराधना की चिन्ता छोड़िये—स्वात्माराधना की ओर दृष्टि दीजिए केवल वर्णी या अन्य की सगति मे विशेष लाभ की सम्भावना नहीं।

श्रावण वदि ११ — आ० शु० चि०
स० २००५ — गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत जिनेश्वर प्रसाद जी योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने—आप स्वय विज्ञ हैं। ससार अनित्य है यह आपको सम्यक विदित है क्योकि पर्याय है। इसके निर्माता हम ही हैं। "मनो विनिगत विश्व मग्यग लयमेष्यति मृत्कुम्भानले वीचि कटक कनक यथा" आत्मा की विकार परिणति का नाम ही ससार है इसका आपको अनुभव ही है। कल्याणका मार्ग कहीं नहीं हममही म है अत सर्व विकल्पोको त्याग यही करो। गृहिणी की औषधकरो परन्तु गृहिणीको गृहिणीही मानो—मोह के जाल मे न फसो—भगवान् का गुणगान करो परन्तु उसे

निन न मानो। सर्व पर द्रव्य म राग छोड़ो— विशेष समय मिलने पर लिखूगा।

श्रा० व० ११ सं० २००८ — आ० शु० चि० गणेशवर्णी

× × ×

श्री महानुभाव लाला जिनेश्वरदास जी योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने—आप जानते हैं मैं जैसा हू—मुझे इस बात की प्रसन्नता है जो आप उस पथ पर हैं जो संसार के बन्धन काट देता है— यह जो संसार के सम्बन्ध हैं पर्याय के अनुकूल होते ही हैं इसमें निजत्व कल्पना ही संसार की जननी है। जहा यह गई सर्व गया—अत: गृहिणी का सम्बन्ध पर्याय के अनुकूल हुआ इसे कौन मेट सकता है। यदि चाहे तो गृहस्थ भी मेट सकता है और यदि निर्मलता न आई तब छोड़कर भी नहीं मेट सकता—अत: अन्तरंग से पर पदार्थ में निजत्व मेटना ही पुरुषार्थ है। मेरा तो यह विश्वास है सम्यग्दृष्टि परमेष्ठी में भी निजत्व कल्पना मेट देता है। उन्हें भी ज्ञेय मानता है। राग होना और बात है, राग में राग होना अन्य बात है।

जेठ बदि १० सं० २००८ — आ० शु० चि० गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय लाला जिनेश्वर दास जी योग्य दर्शन विशुद्धि—

आपका पत्र श्रीपवनकुमारद्वारा मिला— आपके ऊपर जो आपत्तियां आई हैं वह नवीन नहीं। संसार में यही होता है। इनके होने पर सावधान रहना ज्ञानी का कार्य है—वास्तव में जिस दिन हम इन आपत्तियों को ऋण जानकर अदा [illegible] उसी [illegible] इस भवोदधि से पार होने म [illegible]

हू जो किसी के समक्ष अपनी

स्वयं अनन्तशक्तिका धारक है और जिसमे लड़ना है वह भी अनन्तशक्तिवाला है। परन्तु यह उसके चारका ज्ञाता है। यह बेचारा ज्ञाता नहीं। प्रत्युत इस चेतनने ही उसे अपना शत्रु मान रखा है और इसीने उसके विकार परिणमनको अपनाया है अन अपनी विकार परिणतिको ही रोको, यही संसारसे पार करेगी, व्यर्थ किसीके समस अपनी भूल प्रकट न करो। हमारा सम्मति मानो तब प्रत्येक समय प्रसन्न रहो। हम तुमको कौनसा दुःख है। सप्तम नरकका नारकी जिस अवस्थामें है उसको श्रवणकर हम कंप जाते हैं और वह जीव उस घोरसंकट में अनन्त संसार के नाश करने वाले परिणामों को उत्पन्न करलेता है। तुम्हें कौनसी आपत्ति है— खी बीमार है— औषध करो— व्यग्र मत हो और कुछ दिनका ब्रह्मचर्यव्रत लेलो। मेरी सम्मति तो १ वर्ष की है, तुम अपनी परिणति विचार कर व्रत लेना और उसे भी उपदेश दो जो वह भी मोक्षमार्ग में लग जावे। किसीकी सहायतासे अच्छा है परंतु उसे यह अवश्य शिक्षा देना। विवेक से काम करना। मेरा आपसे यही धर्म स्नेह है जो था— हमको जो मिलता है वह गुरु ही मिलता है। मैं इसमे हर्ष ही मानता हूँ।

बैसाख सुदि २ सं० २००८ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीमान् लाला नेमिचन्द जी वकील—योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आपका आया बहुत ही सन्तोषजनक है— धर्मपुरी बनाने के लिये मेरी समझ में किसी व्यक्ति विशेष की आवश्यकता नहीं। आवश्यकता शुद्ध तत्वज्ञानी निरपेक्ष सदाचारी जीवोंकी है। आकाश (स्वर्ग) से नहीं आवे। आप ही लोग उसके योग्य हैं— यद्यपि अभी आपको कुछ शल्य है और मैं उसको योग्य भी मानता हूँ वह आपकी निर्मलता शीघ्रही निकालदेगी। मैं भी अब वृद्ध

हूँ ऐसी धर्मपुरी का आश्रय चाहता हूँ—मुझे आह्वानन की आवश्यकता नहीं—मैं तो कोई योग्य नहीं किन्तु हृदयसे कहता हूँ उत्तमसे उत्तममनुष्य यहां आवेंगे और कायकषाय सल्लेखना कर उस माहल्य का लाभ लेवेंगे—परन्तु आवश्यकता है आपकी परन्तु आवश्यकता है आपकी सम्मति पर जो आपको कहते हैं आरूढ़ हो जावें—शाब्दिक जाल न रचें—मैं हृदय से चाहता हूँ—उस नगरी में वही रहें जो निशल्य हों—सर्व से बड़ी शल्यचेतन परिग्रह से रहित हो—आगामी चातुर्मास में इसकी स्थापना हो जावे—स्थान स्वतन्त्र हो—विशेष क्या लिखूं —लिखना तो बहुत है परन्तु उससे तत्व की पूर्ति नहीं—कार्यसम्पादन करने में ही लाभ है।

ज० सुदि ८ सं० २००७ — आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीमान् महाशय लाला नेमिचन्द जी योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने—आप स्वयं विज्ञ और विवेकी हैं। कल्याणमार्ग में यही मुख्यकारण है—जिनके विवेक और विज्ञान है उसे अब किसीसे मार्ग पूछनेकी आवश्यकता नहीं—मेरा तो यह विश्वास है सुमार्गका निश्चय स्वयं होता है। अन्य तो निमित्त मात्र है। सो निमित्त भी आपके अच्छे हैं। हम तो इस स्वयं विषय में पर की सहायता चाहते हैं। आपको क्या सहायता दे सकते हैं। हां हमारा यह अटल विश्वास है जो पर की सहायताको नहीं चाहते वे ही मोक्षमार्गके पात्र हैं।

पौष वदि २ स० २००५ — आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय बाबू नेमिचन्द जी योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आपका आया समाचार जाने—आप खिन्न होकर व्यर्थ खेद करते हैं। चारित्रकी उत्पत्ति काल पाकर होगी। सम्यग्दर्शन तो श्रद्धारूप है। आपको श्रद्धान तो सन्देह नहीं फिर इतनी आकुलता क्या—श्रद्धा तो अन्तरङ्ग वस्तु है आप जानते हैं।

यदि आप हमारी सम्मति मानो तब घर मत छोड़ना तथा आजीविका की पूर्ण स्थिरता जब हो जावे तभी वकालत छोड़ना—न्याय से आजीविका उपार्जन करना क्या दोषावायक है— स्त्री पुत्र बाधक बधके कारण नहीं, आसक्तता बधका जनक है। स्वरूपाचरणका अन्यपदार्थ कारण नहीं। चरणानुयोग के अनुकूल यथाशक्ति आचरण होनाचाहिये—मन का होना कषायके क्षयोपशम से होता है। श्रद्धा के लिये मन की आवश्यकता नहीं— कल्याणतरु का अंकुर श्रद्धा से ही होता है। काल पाकर वही तरु हो जाता है—मुनी होनेपर आपकल जो कठिनता है ज्ञानी मुनी जान सकता है। बाईजी का कहना था यदि अन्तरंग मूर्छा नहीं गई तब मुनी बनना दम्भ को आश्रय देना है—आप विशेष विकल्पों को छोड़ स्वाध्याय करना वही सन्मार्ग बतावेगा। आतुर होने की आवश्यकता नहीं।

भाद्रसुदि १४ सं० २००२ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीमान् बाबू नेमिचन्द जी साहब योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने। यहां पर १ मास अच्छे अच्छे विद्वानों का समागम रहा जिनके द्वारा पंडितों को तो लाभ हुआ ही था जनता ने भी लाभ उठाया। अन्तिम दिवस का लाभ मुझे भी मिल गया। वर्णी मनोहर तो वास्तवमें मनोहर ही है। चम्पा को इनका सम्बन्ध मिल गया है। फिर निराश ...

बाग मे मनोहर चम्पा की सौरभ फैल रही है उसमे काला भ्रमर भला ही नहीं जावे परन्तु अन्य तो सभी उस सौरभ की लालसा रखेंगे ही। अत: इस चिन्ता का छोड़िये गुरुकुल कैसे स्थिर होगा। अनायास होगा हमारी तो यही भावना है। मैं हृदयसे आपके भावोंकी सफलता चाहता हूँ और श्रीमान् रतनचन्द जी की सरलता मे अल्प ही कालमें यह मनोहर चम्पा बाग बहुत विकसित होगा। मनुष्य की सद्भावना वह वस्तु है जो अपना तो कल्याण करती है उसके निमित्त से जगत का कल्याण हो जाता है। जहा जिनेश्वर दास हैं वहा किस बात की न्यूनता। हरिश्चन्द्रसा दानी हो फिर उस कार्य की न्यूनता स्वप्न म भी नहीं हो सकती— गृहस्थ की झमट क्या मोक्ष मार्ग का बाधक हो सकती है। नहीं। मेरी बुद्धिम नहीं। अत असत्य दु खों का घर सप्तमनरक वहा का निवासी तो अनन्त दु खोंके कारणको मिटा द—स्वयंभूरमण के तिर्यञ्च पचम गुणस्थान प्राप्त कर लेवें और हमलोग धवलाका स्वाध्याय कर कल्याणके पास न हों बुद्धिम नहीं आता—भाई रतनचन्द जी साहब से यह दना अभी सागर मत जावो— जो सागर समुद्र में गोता मारकर रत्न निकालनेवाले थे वह तो अब चले गये—शायद भाद्रादि एकम फ या दो आजावें। अत अभी न आना। भाद्रमास म आना उत्तम होगा। अब तो यहा ऊपर स उसकी लहर लेने वाले ही रह गये हैं।

सागर

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

× × ×

श्रीयुत महाशय पण्डित हुकमचन्द्र जी जैन ब्रह्मचारी योग्य इच्छाकार

मैं कार्तिक सुदि २ को श्री गिरिराज की ओर प्रस्थान करू गा— वहा पर महान् समारोह होनेवाला है— व्याख्यान तत्व निवेचन आदि तो होवेंगे ही— किन्तु यह होना प्राय कठिन है जो ४ या ६

व्यक्ति जोकि सर्व तरहसे सम्पन्न हैं मोक्षमार्गपर आरूढ़ हो— मोक्षमार्गसे तात्पर्य निवृत्तिमार्गसे है— (प्रथम) बिना सम्यग्दर्शन ज्ञान कर्मबंधन नहीं काटसकते— आपेक्षिक विवेचनाकर मूल अभिप्रायका घात नहीं होनाचाहिये— अतः जहांतक पुरुषार्थ हो इसमें लगाना जिससे मेला और यात्राकी सार्थकता हो— आज जो धार्मिकसंस्था यथार्थ नहीं चलती उसका मूलकारण हमारे गृहस्थ भाई त्यागी होकर संस्था नहीं चलाते— अतः परिश्रमकर अबकीबार यह प्रयत्नकरना जो ४ या ६ गृहस्थ आप लोगोंकी गणनामें आजावें— केवल शब्दोंकी बहुलतासे प्रसन्न होनाना पानी विलोवन सदृश है— तथा यहांपर जो संस्था है उसमें २०० छात्र अध्ययन करें ऐसा प्रबंध होना चाहिये तथा आपकी मंडली हो। कमसे कम २० महानुभाव उसमें होना चाहिये—इस प्रकारके व्याख्यान होना चाहिये जो प्राणी मात्रको उसम रुचि हो। धर्मवस्तु व्यक्तिगत है विकासकी आवश्यकता है। जब असंख्यात लोक प्रमाण कषाय हैं तब उनका अभाव भी उतनेही प्रकारका होगा— पूर्ण कषायके अभावका नाम ही तो यथाख्यात चारित्र है। एक भी भेद रहा रहे वहां यह यथाख्यात नहीं होसकता— भगवान् समन्तभद्रने भी लिखा है गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो— आदि अतः ऐसा विवेचन करो जो सर्व मनुष्य लाभ उठा सकें— आज भगवान्के निर्वाणका दिवस है, साथी लोग पावापुर गये हैं, कुछ मन में आया जो आप लोगोंको कुछ लिखूं— अन्तरंग से मैं आपलोगोंके समागमको चाहता था परन्तु कारण कूटके अभावसे नहीं होसका - परन्तु आपको सम्मति देता हूँ जो भूलकर भी हस्तनागपुर क्षेत्रको त्याग कर अन्यत्र न जाना— कहीं कुछ नहीं और सबत्र सब कुछ है तब भ्रमण करने से क्या लाभ— वहीं जो लाभकी वस्तु है अपने में ही है— जब यह सिद्धान्त है तब व्यर्थभ्रमणकरनेसे क्या लाभ प्रत्युत हानि है। मोहीजीव जो न करे सो थोड़ा— मोहीजीव ही

[illegible] यह कहना है यतरै प्रतिपाद्योर्ह यन् परान पनिपादय [illegible] मत्तचे [illegible] निर्विकल्पक — अनगस्थित चित्तवाले जो कुछ भी [illegible] भूलकर न करना— और आपका जो मण्डली है [illegible] को इच्छाकार कहना— और यह कहना— मर्मसे [illegible] इसमें तात्पर्य अपनेमे भी है— जो अपनेसे ममता [illegible] वह फिर [illegible] में ममता करेगा सम्भव नहीं— यदि [illegible] तब गुरुकुल की अपील होनो यह सदश हमारा सुना [illegible] लोगों के व्यय हो उसमें १) में १ पैसा गुरुकुल को [illegible] वार्षिक व्यय ४०००) है तब ६२॥) गुरुकुल को [illegible] भोजन [illegible] विवाह— छात्र सम्मेलन में यह कहना जो छात्र १२०) वार्षिक व्यय करे वह १॥-) गुरुकुल को देवें— यदि [illegible] की आय हो तब हमारी इच्छाकार कहना और कहना गुरुकुल [illegible] को पुष्ट करो इसमें विशेष लाभ है। निवृत्तिमार्ग में यह [illegible] नहीं।

[illegible] आ० शु० चि०
[illegible] १० [illegible] २०१० गणेशवर्णी

× ×

श्रीयुत [illegible] जी साहब
[illegible]
हैं [illegible] है—
पूछना है जो घर
होकर भी क्या
[illegible] में
[illegible] तथा
होना,

[illegible]

आप किसीके पक्षम न आवें— जो आपकी आत्मा साक्षी दे उसी पर अमल करें।

का० व० १४ सं० २० ८ आ० शु० चि०
सेंद्रपाल, ललितपुर गणेशवर्णी

× × ×

श्रीमान् वकील साहब योग्य दर्शन विशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने। मेरा इरादा पहले तो आपके प्रान्त में ही आने का था परन्तु फिर यही विचार आया जो इसरी ही जावें क्योंकि अब अवस्था वृद्ध है। आप लोगोंको कुछ लाभ तो होगा ही नहीं तथा मैं मैं तत्त्व का मार्मिक विवेचन ■ परन्तु उस ओर अनेक आपत्तियां जानकर रुक गया—आपकी तरफ भी अनेक उपद्रव हैं अत माघ के अन्त तक जबलपुर ही रहना अच्छा समझा क्योंकि जबतक इसका गुरुकुल भी बन जावेगा तथा उसका उद्घाटन भी हो जावेगा—आपकी तरफ तो शिक्षितवर्ग है तथा विशाल हृदय वाले हैं— श्री मनोहरलाल, चम्पालाल जी साहब पूर्णबल से गुरुकुल की उन्नति में लग हैं। मेरी भी यह सम्मति है जो उन दोनों महानुभावोंका यही उचित है जो जिस कार्य को उठाया उसे पूर्ण करना चाहिये यही श्री गोमट्ट स्वामी जी की यात्रा है— श्री मालवीय जी एक ही थे परन्तु अपने पुरुषार्थ से स हिन्दू जाति का त्थान कर दिया— श्री जवाहरलाल एक ही हैं भारतमात्र के उद्धार करने का बीड़ा उठाया ■। कृपलानी, राजन्द्र ■ एक ही है—इसी जिन्ना एक ही तो है तमाम मुसलमानों के उद्धार का बीड़ा उठाया है। होना न होना भवितव्य आधीन है— हमारे यहां कार्य भी करते हैं और भरत भी बनते हैं—ऐसा उदासीन भाव कार्य साधक नहीं— सम्यग्दृष्टि उदासीन रहता है सो क्या संसार का नाश तो उदासीनता से नहीं कर लेता—जब तक चारित्र अंगीकार नहीं करता तब तक अविरत ही रहगा— भरत महाराज

बड़े उदासीन थे परन्तु केवलज्ञान भी हुआ जब जब चारित्र अंगीकार किया— अत काय की द्योतक उदासीनता अवश्य छोड़ना चाहिये तथा गुरुकुलकेअर्थ यदि चन्दा मागा जावे इसमें लज्जाकी कौनसी बात है परन्तु हमलोग उसमें अपनी हलक समझते हैं। हमे विश्वास है यदि श्री मनोहर, श्री चम्पालाल जी इस कार्य म सबशक्ति लगा दय तब गुरुकुल एक ही संस्था उत्तर भारत में हो जावे।

१० नवम्बर सन् १९४६ — आ० शु० चि० गणेशप्रसाद वर्णी

× × ×

श्रीयुत वकील साहब योग्य दर्शन विशुद्धि—

आपके पत्र से यह विश्वास हमें हो गया है जो आप निकट भव्य हैं— आपकी जो चिन्ता है वह ठीक है—आपकी जो इच्छा हो सो करना परन्तु एक बात मेरी मानना—जो इस काल में घर न छोड़ना— आजीविका का साधन जो है सो ठीक ही है—व्यापारम इससे भी अधिक भभट में पड़ोगे— अच्छे से अच्छे व्यापारी ब्लेक मार्केट द्वारा धनी बनने की चेष्टा करते हैं—इमानदारी सब व्याख्यान हो सकती है पक्ताल का पता मिथ्यारचना से ही चलना है यह नहीं— कल्याणका मार्ग बाह्य त्यागकी अपेक्षा अन्तरंगमे अधिक सन्निहित है— आप जानते हैं प्रथम गुणस्थानमें रौद्रध्यान रहता है— इसका यह अर्थ नहीं जो आप इसको उपयोग में लावें आपतो निरन्तर संसारसे उदास रहते हैं— यही इस पदमें हो सकता हैं— विशेष क्या लिखें हमारीतो यह श्रद्धा है जो न तो कोई किसी का उपकार करता है और न उपकार करता है केवल मोह की कल्पना है।

मढ़ियाजी — आ० शु० चि०

आ० व० ३ सं० २००३ — गणेशवर्णी

श्रीमान् बाबू मुख्तार साहब व बा० नेमिचन्द जी वकील साहब जी योग्य दर्शनविशुद्धि।

आपका पत्र मिला— मेरा स्वास्थ्य अब पके पानके सदृश है— आप जानते हैं श्रद्धा होनेके बाद यही दशा ज्ञानी जीवकी होती है जो आप महाशयोंकी होरही है— सम्यग्दृष्टिके निन्दा गर्हा यही तो होता — चतुर्थगुणस्थानवाले या पञ्चमगुणस्थानवालेको वीतरागीमुनिकी शान्तिका आस्वाद कैसे मिलसकता है परन्तु श्रद्धा तो निर्मल है—और मेरा यह विश्वास है उसे सांसारिक काम करने पड़ते हैं करना नहीं चाहता है यह तो ठीक ही है। वह शुभोपयोग तक नहीं करना चाहता है। आप लोगोंके पत्रसे मुझे दृढविश्वास है आपका संसार अल्प है। यह प्रशंसाकी बात नहीं क्योंकि मैं जो लिखता हूँ भीतरसे लिखता हू। मैंने १ मास मे २ दिन बोलनेका रक्खा है। इसका कारण यह है जैसे आप अशान्त हैं मैंभी हू इससे यह निश्चय किया जब मुझे शान्ति मिले तब अन्यको उसका उपदेश दू—जबतक आत्मीयकषाय न जावे अन्यको उपदेश देना वेश्या ब्रह्मचर्य के उपदेश तुल्य उसका प्रयत्न है अत आपका यहा आना लाभप्रद न होगा—

द्विदलके विषयमें आशाधार का मत संगत मालूम पड़ता है— खाना व न खाना दूसरी बात है— मनुष्यों की चेष्टा आजकल कौतूहलरूप है— आपतो आगम के अभ्यासी हैं— आजकल बाजारकी जलेबी खावें एकेन्द्रिय व वनस्पति का परहेज करें। मेरी सम्मति है सर्वकुछ करिय किन्तु सहसा घर न छोड़ना—जिसदिन आपकी इच्छाके अनुकूल सामग्री होजावे और परिणामो मे उदासीनता विषयों मे होजावे विरक्त हो जाना— विशेषपत्र अवकाश पाकर दूगा —

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

प्र० चैत्र सुदि ३

श्रीयुत महाशय बाबू नेमिचन्द्र जी साहब वकील योग्य दर्शनविशुद्धि–

भाई साहब को दर्शनविशुद्धि— हमने ८ मासका मौनलिया है और इसकाल में लेखनी द्वारा भी नियमभाव व्यक्त न करेंगे—केवा १ मास में १ वार पत्र दूंगे—संसारमें शान्तिके अर्थ अनेक उपायकिए परन्तु शंकितहें— इसका मूल कारण आत्मीय अज्ञानता है—कल्याणका पथ सरल है परन्तु हमने उसे अपनी अज्ञानतामें अति दुष्कर मान रक्खा है—पर पदार्थमें मूर्छा का त्याग ही इसका सरल मार्ग है—यह यह दृष्टा सरल है कार्य में परिणमकरना कठिन है—अस्तु विशेष क्या लिखूं—नियता का कार्य अनन्त जन्मों में न बना यह भी एक बात चतुरता है—

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान् महाशय बाबू नेमिचन्द्र जी वकील योग्य दर्शनविशुद्धि —

पत्र आया समाचार अवगत हुए—अतिचार या अंग जो प्रतिज्ञापूर्वक जहां पर ग्रहण किया जाता है वहां होता है—जिसके चरणानुयोगके अनुसार व्रत नहीं लिया उसकी प्रवृत्ति में यदि दोष लगता है तब यह अतिचार कैसे—अव्रती के सम्यग्दर्शन में दोष नहीं होना चाहिये प्रत्येक कार्यके लिए उपादान और निमित्तकी आवश्यकता है— इसका कौन— कर सकता है। कल्याणका मार्गके लिए जो आपने लिखा स्वयं आत्मा ही है परन्तु निमित्तकी सबल आवश्यकता है। यहां सबल पदकी क्या आवश्यकता थी—यह सबल पद निमित्त की प्रधानता दिखाता है सा न्याय संगत नहीं—दर्शणकाप्रारम्भ केवली, श्रुत केवली के सन्निधानमें होता है—इसमें क्या निमित्तकी सबलता है नहीं—हमको तो यह विश्वासहै मोहके सद्भावमें निमित्त आरे भी आकुलता होतीहै—दशज्ञानी और अज्ञानीको तो क्याही क्याहै—अन्यथा

छठवेंगुणस्थानमें निदानरूप आर्त्तध्यान न होवे पंचम गुणस्थानमें रौद्रध्यानका सद्भाव न होता है—इतना होनेपरभी मोक्ष मार्गका बाधकनहीं—श्रद्धाकी निर्मलताहो कल्याणकी जननीहै—उदयानुसार कार्य होतेहैं उनमें उदासीनता रखना ज्ञानीका कर्त्तव्य है—सम्यग्दृष्टि प्रत्युत्पन्न भोगोंमें आसक्त नहींहोता—यदि आसक्त होजाय तब वह दर्शनसे च्युतहै—विशेष क्यालिखूं—

आ० शु० चि०
गणेशप्रसादवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला हुकमचन्द जी साहब श्रीयुत पण्डित शीतल प्रसाद जी व श्रीयुत लाला मक्खनलाल जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—आप लोगोंका समागम अत्यन्त हितकर है परन्तु उपयोगी होना चाहिये। कल्याणकामार्ग सुलभ है किन्तु हृदय सरलहोना आवश्यक है—हृदयकी सरलताका अर्थ है अन्तरङ्ग मोह ग्रन्थि नहीं होनी चाहिये— हम अपनी कथा कहते हैं ८८ वर्ष के हो गये परन्तु भीतरसे जिसको कहते हैं उसपर अमल करने में वञ्चित रहे—निरन्तर जगतकी चिन्तामें व्यग्र रहे—इससे अन्तरङ्ग रहस्य स्वप्रशंसा के भिक्षुक रहे—बाहर से भद्र बनना अन्तरङ्गकी भद्रताका अनुमापक नहीं—आप लोगोंको धन्य है जो निर्ममता से बराबर धर्मध्यान करनेका लाभलेरहे हो—आप शुद्ध विचार हम जैसा ज्ञानमें आया लिखदिया—हमारा विचार श्री ईसरी में अन्तिम आयु के अवसान का है—अब श्री पार्श्वनाथ का ही शरण है— आपको वचनदिया था उसका पालन न करसके इसकी क्षमा चाहते हैं।

पौष सुदि ३ सं० २००६

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला हुकमचन्द्र जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार अवगत किए— मेरी तो अन्तरंग यही सम्मति है आप लोगोंने पुरुषार्थकर जो समागम का लाभ लिया है वह सबको हो— अत जहातक बुद्धिपूर्वक पुरुषार्थ चले उसे १ मिनटको भी भंग नकरना— मेरेको तो आप महानुभावोंके समागममें अपूर्वलाभ होगा इसमें कोई शंका नहीं परन्तु मैं हृदयमें यही चाहता हूँ जो आप लोगोंका निमाय समागम हुआ है वह आनिर्वाण भंग न हो— पुरुषार्थों में परम पुरुषार्थ मोक्ष ही है ३ पुरुषार्थों में शान्ति नहीं। धर्मावस्था भी उसकी होनाते परन्तु इनमें शांति का आस्वाद नहीं—यथादि

अलमर्थेन कामेन सुकृतेनापि कर्म्मणा,
एभ्य संसारकान्तारे न मरातमभूत्मन ।
विहाय वैरिणः काममर्थञ्चानर्थसंकुलम्,
धर्ममप्येनयोर्मूलम् सर्वत्र चानादरंकुरु।

तात्पर्य यह है जो धर्म अर्थ कामसे संसारमें शान्ति नहीं प्रत्युत अशान्तिकी ही उत्पत्ति होती है— अत आप लोगोका जो पुरुषार्थ है वह निरपाय पदके अर्थ है— समागम उत्तमहो यह भी एक कहनेकी शैली है नहो यहभी एक कथन पद्धति है वस्तुकी स्वच्छावस्था ही तो हमको प्राप्तहो निरन्तर यही ध्येय ज्ञानीके है यद्यपि श्रद्धाकी प्रबलतामें सम्यग्ज्ञानीकी महिमा अनिर्वाच्य है तथापि चारित्र मोहनीयकी महिमाने ६ मास मृतमनुष्यको बलभद्र छोड़ न सका अस्तु इसके लिखनेका आपके सामने अवसर न था— विशेष क्या लिखूं कल्याणका मार्ग आपमें है हम अन्यत्र अन्वेषण करते हैं यही महती ( ) है बीचमें जो है सो मैं क्या लिखूं ? मेरा तो यह कहना है जितना पुरुषार्थ शब्द वर्गणाओंमें हमारा है उसका शतांशभी यदि आभ्यन्तरमें हो तब यह औत्कृष्ट पर्यायमें होना है अनायास शान्ति होजावेगा— बलवन्तमिद यहा आगए मानते हैं।

सर्वमण्डलीसे यथा योग्य— सत्समागमम यथार्थ निर्णय हो सकता है आजकल प्राय जो लिखनेकी पद्धति है उसम अहम्मन्यताकी गध प्राय रहती है अस्तु हम लोगोंको उचित है जो अन्त करण की शुद्धिपूर्वक तत्त्वका निर्णय करें— यदि अन्त करण न माने मत मानो फिर निर्णय करो—

भाद सुदि ६ आ० शु० चिं०
सं० २०१० गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान् पं० हुकमचन्द जी तथा सर्वमंडली योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने प्रसन्नता इसबातकी है जोआप लोग सामूहिकरूपसे एक विशेष मेजपर तत्त्वविचार कररहे हैं— किन्तु अब अन्यत्र जानेकी इच्छा करनाही आपके तत्त्व विचारमे बाधक है— इस विकल्पको त्यागो जो अन्यत्र विशेष लाभ होगा— लाभतो पर समागम त्यागम है नकि पर समागम म हम गिरार जी मोहवश जारहे हैं— लाभविशेष होगा यह नियम नहीं फिर आप य कहोग क्या जारहे हो— मोहकी प्रबलता— आपका समागम अति उत्तम है— तत्त्व विचार क्षयोपशमके आधीन है— कल्याण होना मोहकी कृशतामें है— समयसारही कल्याणमें प्रयोजक हो सो नहीं कल्याणका कारणतो अन्तरगकी निर्मलता है कल्याणकी व्याप्ति मोहके अभावमें है— सर्वागमका ज्ञान इसका साधक नहीं— अत भूलकर इस भीषण गर्मीमें अपने उपयोगका दुरुपयोग न करिये मैं आधे जेठमें गया पहुँचु गा ज०पर हूँ यहासे २५ मील है— श्री हस्तिनागपुरके मदिर की शीतलताको त्याग बिहारकी ज्वालाम भूलकर अभी मतआइय— मैं आपको तथा आपकी मण्डलीको उत्तम दृष्टिसे देखता हूँ। अत यही सम्मति दूगा जो बाहर जानेके विकल्प त्यागिये— मैं तो जब मन्दिर जाता हूँ प्रतिमा के समक्ष यह भावना व्यक्त करता हू कि

भगवन तेरे ज्ञानमें ऐसा देखा गयाहो जो अब चल न आना पड़े— मेरी चायमात्र करनेमें यहीभावना रहना अब फिर न करना पड़े— चाहे शुभ कायहो चाहे अशुभ— आप लोग ज्ञानी हैं ज्ञानीके साथ मुमुक्षु भी हैं— फिर अब चिरगिनिका एकरबार पलाकर सबसे सम्बन्ध छोड़िये और मुझेभी अपना पात्र इन विकल्पोंसे मुक्त कीजिये विशेष क्या लिखूं —

मसमस—

इस गाथाकी व्याख्यामें तो रागादि परिणामोंका आत्माका व्याप्य व्यापक सम्बन्ध निषेध है और निमित्तकी मुख्यताका पुद्गल के साथ व्याप्य व्यापक सम्बन्ध दिखा दिया है— विचकाम तो निरुद्धता नहीं आनी विशेष समयसारर लिखूंगा—

जितइन्द्रियका यहीतो अर्थ है जो द्रव्येन्द्रिय भावेन्द्रिय और भावेन्द्रियके विषय स्पर्शादिसे आत्मा भिन्न है विशेष फिर

ज्ञेयज्ञायक भावमें अन्तर रागादि न लेना— परभावविवर करना— सामान्य वाक्य है चाहे तुम्हो चाहे शिष्यहो—

परस्पर एकीभूतात इन— यह पाठ है यही अच्छा है ज्ञानमें जो ज्ञेय आता है वह परस्पर एकरूप प्रतीत होता है विशेष फिर

टसिनि के स्थानपर कसिनि पद है।

अभी गर्मी बहुत पड़ती है इससे उपयोग नहीं लगता समय पाकर उत्तर दूंगा।

मगल जो आनन्दसे हैं स्वाध्यायमें रत रहते हैं।

ईसरीगत	आ० शु० चि०
जेठ वदि ५ सं० २०१०	गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्री सेठ जी साहब योग्य दर्शनविशुद्धि।

आपका कौनसा समय है जो समाधि शून्य रहता है। मेरा तो निश्चय निरकाम है जिसकी श्रद्धा निर्मल है वहतो करनेयोग्य

था कर चुका शेषकाल जो समारका है वह पूर्ण होताही है। अन य सब प्रक्रियाओं द्वारा हो रहा है। वह कर्त्ता नहीं। जिस दिन भेद विज्ञानका उदय हुआ उसीदिन कर्तृत्वभाव गया। वृक्ष का बड स्पाड गई अब हरापन के दिन का। मुझे तो इसबातका हर्ष है जो आपके वक्तव्यको सुनकर यही निश्चय हो गया जो पञ्चमकाल म भी उत्तम पुरुषोका अभाव नहीं तथा आप जो भजन पढ़ते हैं 'चिन्मूरति दृगधारी की' उसके दि आपके आचरणमें अक्षरश सत्य प्रतीत होता है।

आ॰ शु॰ चि॰
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्री सेठ जी साहब योग्य इच्छाकार—

आप बहुतही विलक्षण मानव हैं। ऐसा व्यक्ति इस कलिकाल में होना बहुत ही दुर्लभ है जिस व्यक्तिने मूर्छा त्यागदी वही व्यक्ति प्रशमाका क्या, कल्याणपात्र है। मानवता का कारण धनादि नहीं, किन्तु मूर्च्छा त्याग है। धनका त्याग कोई त्याग नहीं क्योंकि वह हमारी वस्तु नहीं। रागादि त्याग भी उपचारसे त्याग है परमार्थ में वह भी तो हमारा नहीं औपाधिक भाव है उसमें जो हमारी निजत्वकल्पना है उस त्यागनाही त्यागहै—परमार्थसे ज्ञानका ज्ञानरूप रहना ही श्रेयोमार्ग है।

आ॰ शु॰ चि॰
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत दयानुभवरसिक सेठ हुकमचन्द जी साहब इच्छाकार—

पत्र पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई— मेरी तो यह धारणा हो गई है जो सम्यग्दर्शन होने के अनन्तर जो भी कार्य होता है चाहे निर्ग्रन्थ साधु हो चाहे अविरत सम्यग्दृष्टि हो कर्तृत्वभावपूर्वक नहीं

होता, पर या रूप तथा परके निमित्त से होने वाले भावों का यह कर्त्ता नहीं बनता— इसका अर्थ यह है यह ज्ञानचेतना ही या कर्त्ता होता है। यद्यपि इसके अभी अविरत अवस्था में अप्रत्याख्यानादि कषाय विद्यमान हैं जिससे वे मन्दलकषाय है तब मुनि जो काय सञ्ज्वलन के उदय में कर्त्ता है अभिप्राय में उन्हें उपादेय नहीं मानता एवं सम्यग्दृष्टि भी अप्रत्याख्यानादिके उदयमें जो कार्य करता है उपादेय नहीं मानता— मार्ग दोनों का एक है यहभी कर्मोदय को स्वायत्त अदा करता है, अन्तर इतना ही है जो महापुरुष संसारके सबही कार्यों से उपरम हो चुका है यह अभी उनसे करता हुआ तटस्थ रहता है। साक्षात् मोक्षमार्ग का दोनों के अभाव है। अतः मुक्तकी तरह गृहस्थावस्था में भी और मोक्षमार्ग के सन्मुख है गाड़ी लेनपर आगई एककी चलरही है एककी चलनेके सन्मुख है। आपको क्या लिखूं आप स्वयं ज्ञाता है तथा समझ विद्वानों के समागम में रहते हैं। सम्यग्दृष्टि आत्मानुभव करे तब और न करे तब मिथ्यात्व के असद्भावसे उसकी दशा स्वच्छ ही रहती है। उपयोग कहीं रहे सम्यग्दर्शन कृत निर्मलताका वल सदाही रहता है। समाधिमरण के समय यदि असाताका तीव्र उदय आजावे तो आत्मगता सम्यग्दर्शनकृत विशुद्धि की क्षति नहीं। अतः आपको समाधि उत्तम हो जावे इसका विकल्प न करनाचाहिये। जिस भव्यजीवके सम्यग्दर्शन है उसके सप्तभय श्रद्धासे पलायमान होजाते हैं। उसकी दृढ़ता सामान्य नहीं जिसके होनेपर अनन्त संसार मिट गया उसके सद्भाव में अथ भय किसका— विशेष क्या लिखूं —

कार्तिक वदि ३ सं० २००६ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान महाशय परमविवेकी सेठ जी साहब योग्य इच्छाकार
पत्र वाचकर परम हर्षहुआ— आपके भावोंकी निशुद्धताका

आपके मोक्षमार्गमें कारणभूत है। अन्य निमित्तमात्र हैं। मेरेमात्र मैं यह ध्यान समागई जो पञ्चमकालमें भी उत्तम जीव हैं। आपको क्या लिखूं — आपके निमित्तसे अनेक जीव श्रद्धावान होरहे हैं— मैं बनारस होकर डालमियानगर पहुंच गया—बनारसमें जो मन्दिर बनवाया गया है अत्यन्त मनोज्ञ है, मूर्ति परम सुन्दर है। अनेक प्राणी दर्शनसे लाभ उठा रहे हैं— आपके धर्मायतनोंमें दूसरोंभी गणनारहे ऐसा मेरा अभिप्राय है— यहासे गया जाऊंगा।

डालमियानगर — आ० शु० चि०

द्वि० वै० सु० ६ सं० २०१० — गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय नेमिचन्द्र जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्रआया— समाचार जाने— वस्तुस्वरूप जानकर उपेक्षाही सर्वके हो यह नियम नहीं— सम्यग्दृष्टि जीवके वस्तु परिज्ञान होता है ऐसा नियम है। उसके चारित्र मोहके सद्भावमें उदासीनता होती है न कि उपेक्षा— मोहके सद्भावमें व्याकुलता होना कुछ अनुचित नहीं— क्या पंचेन्द्रियोंके विषयोंको त्यागदेना सरल है ? नहीं— उनमें रागद्वेष नहीं होना सरल है। यह चारित्र मोहके कृश भावमें होती है— आप व्यर्थकी ऊहापोहमें मत पड़ो— जो मार्गका अनुसरण किया है वही मोक्षमार्ग है। पूर्णतातो समय पाकर होगी अभीतो यथाशक्ति पर्यायके अनुकूलही शान्ति मिलेगी— १ सेर मुखवालेको १ तोला मिलना शान्तिका कारण नहीं— परन्तु स्वादतो आही जाता है।

जेठ सुदि १२ सं० २००२ — आ० शु० चि०

गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय बाबू नेमिचन्द्र जी साहब योग्य दर्शनविशुद्धि—

आप सानन्द ... पने आभ्यन्तर ...

दूर करनेका प्रयास करना— मेरा तो यह विश्वास है अन्तरंग मूर्च्छा के दूर करनेमें कोई बाह्य निमित्त की आवश्यकता नहीं—आवश्यकता इस बातकी है जो हम उसको संसारका कारण जानें— जितना आवश्यकता हम स्वदर्शनकी मानते हैं उससे अधिक आभ्यन्तर मूर्च्छा जाननेकी है। स्वदर्शन करनेका फल मैंतो आत्मीय परिणति का ज्ञान होनाही मानता हूं— तथा शास्त्राध्ययनका फलभी यही मानता हूं— यदि आत्मपरिणतिकी प्रतीति न हुई तब यह सर्व विडम्बनामात्र है।

आ० सुदि १५ सं० २००२

आ० शु० चि०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 ×

श्रीमान् महाशय बाबू नेमिचन्द जी—

पत्र आया— समाचार जाने। क्या सम्यग्दर्शन होनेके बाद जो प्रवृत्ति गृहस्थकी पहले थी वह एकदम छूट जाती है। मेरा तो यह श्रद्धान है यदि इस जीवके चारित्रगुणका घातागम न हो तब उस प्रवृत्ति में कुछभी अन्तर नहीं आता, केवल जो आसक्तता विषयोंमें मिथ्यात्व अवस्थामें थी वह नहीं रहती, शिथिलता आजाती है। केवल विषय और कषायोंमें स्वरूपसे शिथिलता आजाती है। इसी का नाम उदासीनता है। इसीका नाम अनासक्ति है—

जिन जीवोंने अपराध किया है उन जीवोंके ऊपर तत्काल अथवा कभीभी उनके यथाविनाश अभिप्राय का न होना उसे प्रशम कहते हैं। सम्यग्दृष्टि जीवका अभिप्राय इतना निर्मल है जो अपराधी जीवका अभिप्रायमें बुरा नहीं चाहता— अर्थात् उसकी वासना अतिनिर्मल है—उपभोग क्रिया जो उसके होती है उसका कारण कुछ और ही है। दर्शनमोहनीय कर्मके उपशमादि से वह भोगोंको नहीं चाहता है फिर भी चारित्रमोहके उदयमें बलात् उस उपभोग क्रिया करनी पड़ती है। बिना अभिप्रायके भी क्रिया होती

है। एतावता उसके विरागता नहीं है ऐसा नहीं कह सकते। जब ऐसी व्यवस्था है तब यदि अविरती न्यायसे व्यापार और विषयके कार्यों में भाग लेता है कौनसा अनर्थ है—इसका यह तात्पर्य नहीं जो स्वच्छन्द होकर अनर्गलप्रवृत्ति करने लगजावे— यदि उसको आत्मकल्याणकी रुचि न होती तब निन्दा गर्हा क्या करता—शास्त्र-स्वाध्याय से ज्ञानका विकास होता है और जितने अभिप्राय विशुद्ध हैं—उनके यथार्थ तत्त्वोंका बोधहोता है—परन्तु इसका यहअर्थ नहीं जो तत्वज्ञानसे चारित्र तत्कालही हो जावेगा—चारित्र भाज्यहै— देखो सर्वार्थसिद्धिके अहमिन्द्र—आजन्म मरणान्त तत्वविचारमें ही अपनी आयुको पूर्ण करतेहैं— उनके चारित्र का लेश भी नहीं तब क्या उनका तत्वज्ञान व्यर्थ है? नहीं। आयुके अवसान बाद मनुष्य जन्म में समय पाकर एकजन्म संयमके पात्र हो मोक्षकेपात्र होते हैं। यहआप कह सकते हैं वहां संयमकी योग्यता नहीं यहां तो संयमकी योग्यता है क्या नहीं संयम होता—यह कोई नियम नहीं जितने अविरत सम्यग्दृष्टि हैं उन्हें संयम हो ही जावे, भाज्य है अतः इस विषयमें अपने अभिप्रायको देखो यदि उसमें मलीनता है लौकिक प्रतिष्ठादि के अर्थ यदि शास्त्रका अभ्यास और साधु समागम है तब तो वह विशेष फलदायक नहीं और ■ आत्मश्रेय केलिए है। अपनेको हठात् दर्शन के विरुद्ध भावोंका स्वामी मानना आपसे विज्ञपुरुषों को यद्यपि उचितनहीं— उनकेअनुकूल शान्ति का आस्वाद आता है— इस गृहस्थावस्थामें आप मुनिकी शान्ति का आस्वाद चाहें तब कैसे मिलसकता है— अविरत अवस्थामें जो मोक्षगामीजीव हैं उनकीभी यहीअवस्था रहती है, निरन्तर इसी प्रकार के भाव होतेहैं केवल अभिप्राय मलीन नहीं होता। अतः जिन जीवोंके अभिप्राय स्वच्छ हैं वे गृहस्थअवस्थामें श्रीरामचन्द्रजी की तरह व्यग्र होतेहुयभी समय पाकर क्रमशत्रुका विनाशकरनेमें सुकुमालादिवत् आत्मीयशक्तिका सदुपयोग करनेम नहीं चूकते—

कदाचित् आप यह कहो यहतो सर्व आगमोक्त ही तो क्या है इसमें कोई विवाद नहीं परन्तु अनुभवकी साक्षी देकर परामर्श करो तब यही निष्कर्ष निकलेगा— जो आगम तो निमित्त है यह सर्वकथा सम्यग्दृष्टिके परिणामों की है— आगम तो कथनकरनेवाला है— मेरातो यह विश्वास है जो सम्यग्दर्शन जैसा लोग दुर्लभ समझ रहे हैं नहीं है—आजतक हम लोग जो संसारमें अनेकयातनाओंके पात्र हुए इसका मूलकारण हमारी ही अज्ञानताहै— वाह्यपदार्थों का अपराध नहीं— और न मन वचन कायके व्यापारोंका अपराध है— और न क्रोधादि कषायोंका अपराध है अपराध हमारे विपरीत अभिप्रायका है—क्रोधादि कषायों की पीड़ा नहीं सही जाती इससे जीव उनका कार्य कर बैठता है परन्तु यह विपरीत अभिप्राय ऐसा निकृष्ट परिणाम है जो अनात्मीयपदार्थोंमें आत्मीयताका मान कराने में अपना निमन गिराता है। यही मूल संसारका है।

आ० सु० १३ सं० २००१ आ० शु० चिं०
गणेशप्रसादवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय बाबू नेमिचन्द्र जी वकील दर्शनविशुद्धि—

संसारमें शान्तिका कारण न तो सन्तसमागम है और न तीर्थ यात्रा ही है और न शास्त्राध्ययन ही है— निमित्तकी अपेक्षासे जो आवे सो कहदो और मनमें जोआवे सो कल्पनाका आश्रय दो, किन्तु यावत् अन्तरंगमें परपदार्थमें निजत्व की मूर्छा है तावत् ये सर्व निमित्त कुछ भी नहीं करसकते और मूर्छाके जानेपर अल्पभी निमित्त कार्यकर हो जाता है। अतः उसकी ओर लक्ष्यरहना ही हमारा कर्त्तव्य है।

का० सु० ४ सं० २००२ आ० शु० चिं०
गणेशप्रसादवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान् बाबू नेमिचन्द्र जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

अन्तरंग स्वास्थ तो मैं उनका मानता हूँ जिन्हें सात्विक धर्ममें प्रेम है—यह स्वास्थ जैसा आपका है वैसा ही मेरा है—गृहस्थकी झंझटनो उसके समक्ष कोई वस्तु नहीं—और उन झंझटोंसे न तो आप इस पर्यायमें मिट सकते हैं—और न मिटही सकती हैं। मेरातो यह विश्वास है जो एक लंगोटेवालेके भी पदके अनुकूल यह व्यवस्था है—और अधिक क्या कहूँ—प्रमत्तावस्थान पर्यन्त भी यह झंझट है—सातिशय प्रमत्तसेही उन आपत्तियों से मुक्ति मिलती है—मलेरियाकी चिन्ता क्या करें। यह तो चिरसंगत होगया है। शायद पर्यायके अवसान में उसका अन्त हो—उसके मूल-कारणका वियोग तो अभीदूर है—आप अन्य विकल्पोंको दूर कर केवल एक विकल्पको रखिये जो अनात्मीय पदार्थों में आत्मीय बुद्धि न हो—

फागुन सुदि ८ सं० २००२ आ० शु० चिं०

गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला नेमिचन्द्र जी वकील योग्य दर्शनविशुद्धि—

महाशय आप विद्वान हैं—अविरत अवस्थामें न्यायपूर्वक आजीविका करना अपराध नहीं—अभिप्राय मलीन होने से आत्मा अपराधी होता है - आपके अभिप्रायमें यदि वञ्चनाका अभिप्राय नहीं तब आप मायाचारी नहीं—गृहस्थावस्थामें चाहे वह गृहविरत हो चाहे विरत हो आशिक मोक्षमार्गकी बाधा नहीं—जैसे तो एक लंगोटी मात्र परिग्रह सोलह स्वर्गसे उपरका मार्ग रोके है। आप सानन्दसे रहिये और धर्मसाधन करनेका जो आपका मार्ग है उसे प्रशस्त रखिये—वर्तमानयुगमें निष्कपट समागमका मिलना परम दुर्लभ है—सर्वसे उत्तम समागम तो अपनी रागादि परिणतिको घटना यही है—

आ० शु० चि०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला नेमिचन्द्र जी योग्य दर्शन विशुद्धि —

जो वेदना आपको है मुझे यह विश्वास है यह वेदना-प्रमत्त गुण स्थान तक रही है। अल्प बहुत्वका ही भेद है, जातिमें भेद नहीं—उसका अभाव तो मोह के अभावमें ही होगा—और जो सुख सिद्धा के हैं वही चतुर्थ गुणस्थानवर्तीके है—यहा पर अंश रूपसे है वहा पूर्ण है—अन-श्रद्धा होनेपर जितना प्रयास हो ऊपर जाने का होना चाहिये आकुलता को आश्रय न देना—मलेरिया तो परम मित्र हो गया है—उसका कहनाह अन्तिम अवस्था तुम्हारी है—हम न होते अन्य रोग होवे जो भयकरता धारण कर बेसुध कर देते—हम यह दशा तो नहीं करते—अत सन्तोष से सहो—यदि हमसे अरुचि करतेहो तब क्याकाम—जिन परिणामोंसे हमारी सत्ता है उन्हें छोडो और हमारी चिन्ता छोडो आयुके अन्तम तो हम जावेंगे ही परन्तु वह ससार वर्धक परिणाम तो साथ ही जावेगा। केवल पढनेंमे व बाह्य त्यागमे कुछ लाभ नहीं—

आ० शु० चि०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय नेमिचन्द्र जी साहब योग्य दर्शन विशुद्ध—

पत्र आया समाचार जाने—आपने लिखा इस पर्याय म आंशिक चारित्र भी नहीं धारण कर सकता—मेरी समझमें नहीं आता क्यों नहीं धारण कर सकते—क्या बाह्य कारणकूट उसके बाधक हैं? नहीं। अनायास अन्तरंग मूर्च्छाके अभावमें उसका सद्भाव हो सकता है—दूसरी बात—यह बात छोडो मैं अपनी श्रद्धा भी निर्बल पाताहू—यह भी लिखना सगत नहीं—आपके तो कुछ

भी यानहीं बड़े विलक्षण कार्य सम्यग्दृष्टियों द्वारा हुये जो अज्ञानी जीवोंकी दृष्टिमें सर्वथाही अनुचित प्रतीत होतेहैं परन्तु धान विलक्षण है ज्ञानीका भाव अज्ञानीके दृग्यम आना कठिन है— क्या सम्यग्दर्शन होनेके बाद व्यापार छूट जाता है जो आर्थिक चिन्ता न करनी पड़े— एक सीताके अर्थ श्री रामचन्द्र महाराजने जो उपद्रव किये वचनातीत हैं— श्री भरतजीने जो किया सो कुछ आपसे छिपा नहीं श्री मायनन्दि महाराजने जो किया प्रसिद्ध है—श्री समन्तभद्र स्वामी नेजो किया आबाल गोपाल विदित है— मेरा यह तात्पर्य नहीं जो स्वेच्छाचारको पुष्ट किया जावे— फिर भी वस्तु स्वरूपको अनुभवमें लाना चाहिये— मुझसे पूछियेतो हम लोग कुटुम्बहीन होकरभी संसारकी व्यग्रताके पात्र हैं। आपको ४ या ६ की चिन्ता होगी— परन्तु सघनायक आचार्योंको सहस्रों शिष्योंको शिक्षा दीक्षा देते हुये अखण्ड मुनिधर्म पालन करनेमें समर्थ रहते हैं— व्यर्थकी चिन्ता छोड़िये— आपतो विज्ञ हैं— ऑन्थिक भावोंकी परिपाटीमें भयमत करिये— अप्रत्यन् समझकर सन्तोष करिये— विषयतो बहुत अच्छा है परन्तु शरीरकी दुर्बलतासे पूर्ण लिखनेमें समर्थ नहीं। प्रतिदिन ४ घंटा मलेरिया मित्रका सहवास रहता है - यह उसकी अनुकम्पा है जो प्रातःकाल १ घंटा स्वाध्यायको सानन्द करने देता है।

कार्तिक वदि ८ सं० २० ? आ० शु० चिं०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला मंगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धि —

असलम जबतक अपनी कषाय परिणति है तबतक यह सर्व उपद्रव है। कषायके अभावमें कहीं रहो कोई आपत्ति नहीं— कषाय के अस्तित्वमें चाहेनिर्जन वनमें रहो चाहे पेरिस जैसे शहरमें निवास करो सबही ... 'यही कारण है जो मोही ...
मोक्षमार्गसे ... निर्मोही गृहस्थ मोक्षमार्गके

है— खेद इस बातका है जो मोहीजीव स्वसन्शाही निर्मोहीको बनाने की चेष्टा करता है आप मोहको नहीं छोड़ना चाहता। यहांपर क्या सर्वत्र यही बात देखने में आती है— हम जो लिखते हैं उसपर अमल नहीं करते केवल अपनी मलिन परिणतिको त्यागनेके भावसे वंचितकर छिपानेका प्रयत्न करते हैं।

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला मंगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया— हमको अबतक मलेरिया मित्रता नहीं छोड़ता। जो उदय है उसे भोगनाही उचित है— यह कौन कहता जो गार्हस्थ्य जीवनमें निराकुलताकी पूर्ति नहीं। यदि निराकुलताकी पूर्ति गृहवास में होजाये तब कौन ऐसा चतुर मनुष्य इसे त्याग दैगम्बरी दीक्षाका आलम्बन लेता— एवं पोषीनके सद्भावमें साक्षात् मोक्षमार्ग रुक जाता है— किन्तु इसका यह अर्थ तो नहीं जो गृहावस्थामें एकदेश मोक्षमार्ग न हो— यदि गृह छोड़नेसे शान्ति मिले तबतो गृहछोड़ना सर्वथा उचित है यदि उसके विपरीत आकुलताका सामना करना पड़े तब गृहत्यागसे क्या लाभ— चौबेसे छब्बेहोना अच्छा परन्तु दुबे होनातो सवथाही हेय है। अभी दूरस्थ भूधरा रम्या दहरहेहो— जिन्होंने गृहवास छोड़कर क्षुल्लक ऐलकतक पद अंगीकार किया— वे मोटरो व रेल सवारियोंमे सानन्द यात्रा कररहे हैं तथा गृहस्थासे भी विशेष आकुलताके पात्र हैं— तथा जो आरम्भ त्यागके नीचे हैं वे गृहस्थसे अधिक परिग्रह पासम रखते हुयेभी त्यागी बनरहे हैं। तथा वृत्तिको इतनी पराधीन बना रक्खी है जो विवरणकरते लेखनी कम्पायमान होती है। अपना परिग्रहतो त्याग दिया और फिर अन्य से याचनाकर संग्रह करना क्या हुआ— खेती करनेके तुल्य व्यापार हुआ— आप विवेकी हैं भूलकर पराधीन न होना। सानन्द स्वाध्याय

म काल लगाना— किसी काममें जल्दी न करना। स्वर्गीय चिरोंजा बाई जीका कहना था कि बेटा अपना परिग्रह छोड़कर परकी आशा न करना, अन्यथा करनेसे दुःखके भाजन होगे यह हम अनुभव है।

आ० शु० चि०

गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत लाला मगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

आप सानन्द होंगे और शान्तिसे स्वाध्याय करते होंगे—निमित्त कारणोंकी प्रणालीसे कदापि क्षुब्ध न होना— यह प्रणाली सर्वत्र है संसारमें जहां जाइये वहीं यह अपना साम्राज्य जमाये है— परन्तु धन्य वह मनुष्य है जो इसके चक्रमें नहीं आता- निमित्त चमत्कार हमारा कुछ अनर्थ नहीं कर सकते। यदि हम स्वयं उनमें इष्टानिष्ट कल्पना कर इन्द्रजालकी रचना करने लग जावें तब इसे कौन दूर करे? हमी दूर करनेवाले हैं। अतः सर्व विकल्पोंको छोड़ केवल आत्मबोधके अन्य किसीको भी वैरी न समझना और सर्वथा हितकारी समझना। यदि ये बाह्य दुःखद कारण न होवें कौन इस संसारमें उदास होगा— अतः किसीभी प्राणीको अपना बाधक न समझकरही कल्याणका पथिक होना है—

आ० शु० चि०

गणेशप्रसाद

卐 卐 卐

श्रीमान् महाशय लाला मगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने। आगमज्ञान मुख्यवस्तु है— पर पदार्थका ज्ञाता दृष्टा रहनाही तो आत्माका स्वभाव है और उसकी व्यक्तता मोहके अभावमें होती है। अतः आवश्यकता इसीके कृश करनेकी है - यथार्थ ज्ञानतो सम्यग्दर्शनके होतेही होजाता है— इष्टानिष्ट [illegible] मोहके उदयमें होती है—

होना दश संयमादि गुणस्थानोंमें क्रमसे होगा— आपलोग ०क्दम चाहते हैं कि हमारे चारागारी शान्ति आजाय— सो मेरी समझमें नहीं आता— पर्यायके अनुकूलही शान्ति मिलेगी— हाथटा मत मारो शनै शनै सर्व होगा— विशेष क्या लिखें— तात्विक बातनो थोड़ी है विस्तार बहुत है— मेरीतो यह श्रद्धा है जो विपरीत मोहक ज्ञान था' जो आत्मानुभव सम्यग्ज्ञानीके होना है वही क्रमसे मोहादिपर्ये अभाव होनेपर केवलज्ञानरूप परिणाम होजाता है— अगर आपकी श्रद्धा सत्य है तब आप अपनेको संसारी मत मानों क्योंकि सिद्ध पर्यायके सम्मुखही— आरहा है अब सर्व व्यसनाओंको छोड़ जो पर्याय उत्पन्न हो गयी है उसे वृद्धि करने की चेष्टा करो— कदाचित् यह कहो सम्यग्दृष्टी तो निन्दा गर्हा करता है— मेरी इसमें यह श्रद्धा है सम्यग्दृष्टिके मोहके उदयमें निन्दा गर्हा होती है— वह अहम्बुद्धिसे उसको करता नहीं— निन्दा गर्हा अनात्मीय धर्म हैं अनात्मीय धर्मोमें उसके उपादेय बुद्धि नहीं— इसका अर्थ यह नहीं जो मैं स्वच्छन्दका पोषक हूँ— स्वेच्छाचारितातो सम्यग्ज्ञानीके होती ही नहीं। यदि वह स्वेच्छाचाराहो तब आत्मज्ञानसे च्युत है - क्यों कि आत्मख्यातिमें - जहा प्रतिक्रमणको विष कहा है वहां अप्रतिक्रमण अमृत नहीं होसकता—

आ० शु० चि०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत लाला मंगलसेन जी योग्य इच्छाकारनिवृद्धि—

बाबाजीका स्वास्थ्य अत्यन्त दुर्बल है— भीतरसे सावधान हैं— ऐसी अवस्थामें परमात्मारूप आत्माहीका शरण है— अन्यका शरण व्यर्थ है। मेरीतो यह धारणा है परकी सहायता परमात्मा पदकी बाधक है। आत्माकी केवल अवस्थाहीका नाम मोक्ष है— यदि आपको इतनी समता आगयी है जो परके निमित्तसे हर्ष विषाद नहीं

होना है तब हमारी समझ में और अधिक इसमें क्या चाहते हो? यदि चाह है तब वह समता नहीं आई केवल आभास है— जहां पर की चाह है वहां समता नहीं— समताका जहां उदय है वहां आत्मा की कृत्यकृत्यावस्था हो जाती है, करनेको शेष नहीं रहता।

आ० शु० चिं०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशयलाला नेमिचन्द्र जी सकीन दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया—समाचार जाने—मेरी समझमें यह व्याप्ति नहीं— जो संस्कृत जानने वाला ही तत्त्वचर्चा का अधिकारी होता है— अथवा जो हो इसमें हमको विवाद नहीं—हमारा तो यह विश्वास है जो आत्मज्ञान के प्रति दर्शन मोहाभाव कारण है उसके प्रति कारण पंच लब्धि हैं। उनमें ४ लब्धि जीवने अनन्त बार पाईं— करण लब्धि बिना उसकी प्राप्ति दुर्लभ है— वह लब्धि क्या संस्कृत प्राकृतके ज्ञान से मिलती है? यदि ऐसा नियम है तब तो हिन्दी आदि जाननेवाले वंचित ही रहेंगे— और प्रभु की दिव्यध्वनि का लाभ संस्कृत प्राकृतज्ञ ही लेसकेंगे—शेष तो बुद्धू के बुद्धू ही रहेंगे— आत्मज्ञान कुछ ऐसी कठिन वस्तु नहीं जैसाकि लोग समझ रहे हैं— आप और परका ज्ञान कोई दुर्लभ नहीं आपने पत्र दिया उसका कर्तृत्व आपमें है। आप लिखते हैं आ० आ० नेमिचन्द्र। यदि आपको अपना बोध नहीं तो क्या लिखते हैं पत्र प्रेषक नेमिचन्द्र। अपनेमें मुझे भिन्न मानते हैं तभी तो जबलपुर के पते से पत्र दिया—और भेद ज्ञान क्या होता होगा— केवल आवश्यकता इस बात की है जो आत्मा में रागद्वेषादि होते हैं उन्हें औदयिक समझ पृथक करने का भाव होना चाहिये पृथक करने का यह अर्थ नहीं— जो पर वस्तु को छोड़ दिया जावे—वे तो भिन्न द्रव्य के पर्याय हैं—उनमें जो निजत्व की कल्पना है उसे छोड़ा जावे

यह लिखनाभी मिथ्या है—जब हम ऊ ह पर समझते हैं तब निनत्व की कल्पना नहीं हो सकती— केवल चारित्रमोह रागादिकी उत्पत्ति करता है किन्तु दर्शन मोहके जानेसे अल्पकालमें भी यह भी अनायास छूट जावेगा— श्रद्धान तो यथार्थ है परन्तु त्याग पर्याय के अनुकूल ही होगा—सौधर्मेन्द्र मनुष्य होकर मोक्ष जावेगा—उसके दृढ श्रद्धा है। परन्तु उस पर्याय म यह अणु मात्र भी त्याग नहीं कर सकता— एव यदि मनुष्य भवम किसीकी श्रद्धा निर्मल हो और यह न तो संस्कृत जानता है और न त्यागी है तब क्या उसके आंशिक मोक्षमार्ग नहीं है इत्यादि—आप लोगोंकाउदय उत्तम है जो इस प्रकार धार्मिक भावना आदर करते हैं।

चैत्र सुदि ११ सं० २००३ आ० शु० चि०

गणेशप्रसादवर्णी

卐 卐 卐

श्रायुत महाशय प० हुकमचद जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— लिखें आनन्दसे लेकर स्वाध्याय किया परन्तु जीवन होनी चाहिये वह न हुई तब क्या निकला—कहने से करने मे बड़ाअन्तर है। तथा अब हमको निराश होगया जो गल्पवाद मे आत्मशान्ति का लाभनहीं करसकता। अब स्वाध्याय म प्रवृत्ति करनी कार्यकारिणी है— स्वाध्याय से मेरी बुद्धि म यह आता है जो ज्ञान चारित्र दोनो का लाभ होता है। यदि स्वाध्यायमे चारित्र लाभ न हुआ तब मेरी तो यह प्रतीति है यह स्वाध्याय नहीं एक तरह का पढ़ना है। जैसे प० पंडित लोग निरूपण करते हैं परन्तु पर्याय के अनुरूप भी चारित्र नहीं पालते अत उनका शास्त्र पढ़ना विशेष लाभदायक नहुआ— उसी तरह यदि हम लोगों की प्रवृत्ति हो तब त्यागी और पंडित म अन्तर क्या रहा— आपतो विवेकी हैं। लक्ष्य स्वात्मकल्याण की ओर रहना चाहिये—हमभी यही चाहते हैं—किन्तु चाहते हैं करनेको कायर बनते हैं यह भी

हमारीनिर्बलता है— सर्व अवस्था— की कल्याण म बाधक नहीं, सप्तमनरक की बाधा बाधक नहीं तब यह—का विचारा क्या बाधक होगा—विशेष क्या लिखें।

द्वि० श्र० वदि १२ स० २००७ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय व हुकमचन्द जी साहब व श्री प० शीतलप्रसाद जी साहब योग्य इच्छाकार—

पत्र आया, समाचार जान— आप जानते हैं जो हम इस अनन्त ससार म आनेक भ्रमण कर रहे हैं इसका मूल कारण हमारी ही अज्ञानता थी— अब यह हमारा विश्वास है आप लोगों आगमाभ्यास तथा दृढ़ अध्यवसाय से उस हटा दिया है—श्रद्धा में तत्पदार्थ आगया है—समय पाकर तद्रूप परिणमन होनेमें विलम्ब न होगा— अब चिन्ता करने की कया करना सर्वथा अनुचित है—भ्रमज्ञानको भ्रम जाननाही भ्रमके ध्वस का कारण है— मैं प्रशसा नहीं लिखता। जिनको तत्व निश्चय यथार्थ होगया उन तो भार उतरनेसे हलकापन आजाता है— तत्सदृश दशा का आस्वाद आने लगता है। यह बात ज्ञान ही जानता है। इसीसे ज्ञान गुणका महत्व अध्यात्म में है। यही कारण है कि सभी पर्याय बिना ऐसा ज्ञान नहीं होता— हमारे भोले भाई पञ्च इन्द्रिय व मनको रोगजनक मानतेहैं— ऐसा नहीं— यह तो ज्ञानके साधक हैं— बाधक तो विपरीत ख्याति है जिसमें मोह की पुट है—इसको भी ज्ञानी जानता है— मेरा तो आपसे कहना है आगमाभ्याससे उत्तम उपाय आत्मकल्याण का नहीं—अन्य काम हो जावें हो जाओ किन्तु उनका लक्ष्य न हो। हम तो अन्तरंग से आपके सत्सग को मोक्षमार्ग का साधक मानते हैं। आप लोग उसे सफलजनित रखना।

सागर विद्यालय — आ० शु० चि०
वैसाख ब० ३ स० २००६ — गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० हुकमचन्द जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— हमारी तो यह सम्मति है आप अब निर्द्वन्द्वतापूर्वक धर्मसाधन करिये—स्थान तो सर्वत्र हैं और जो धर्मके साधन हैं वेसा सर्वत्र हैं—किन्तु मोही जीव अपनी परिणति के अनुकूल पदार्थ को देखता है। पदार्थतो जैसा है वैसाही है—किन्तु हम मोही जीव कामला रोगी के सदृश श्वेतशङ्खको पीतशङ्ख व अपने अभिप्रायके अनुकूल उसे मानते हैं। मोक्षमार्गीजीव जिनेन्द्र प्रतिमा को अपने अनुकूल साधक मानते हैं और जो इस सिद्धान्त को नहीं मानते वे उसे प्रतिकूल ही मानते हैं— अतः पदार्थको अनुकूल प्रतिकूल मानना मोही जीवकी कल्पना है—पदार्थ तो जैसा है वैसाही है— आपलोग तत्वज्ञ हैं— किसी के उपक्रम नहीं पड़ने वाले हो —मुझे तो यह विश्वास है जो हम सबकी मनुष्यों में कौन ऐसा है जो अपनेको जानता हो—किन्तु उस जाननेमें विपरीत तादि दोष हों यह अन्य बात है। कामला रोगीशङ्ख अवश्य देखेगा परन्तु उसमें पीत गुण मानेगा—इससे सिद्ध हुवा धर्म में भ्रान्ति है न कि धर्मीमें। एव मिथ्यादृष्टि का ज्ञानभी इतना विकसित है जो आत्माको जानता है परन्तु उसके धर्मों में भ्रान्ति है न कि धर्मी में सो इस भ्रान्तिका मूलकारण मिथ्यात्व का उदय है अतः आवश्यकता इस बात की है जो हम मिथ्यात्व को मिटावें—तदर्थ हृदयको स्वच्छ करनेकी आवश्यकता है— जिसदिन यह स्वच्छ हो गया अनायास हमारा कल्याणहै— मैं तो अब पक्वपान सदृश हू— परन्तु भीतरमें यह भावना है जोमोक्षमार्ग रुचिवान जीवोंका अविनय सदृश इसकाल में रहे तो यथार्थ मार्ग चले— आपकी मण्डली का मुझे बहुत ही अभिमान है जो इस दुखमकालमें अभीभी तत्वज्ञ हैं—

जहांतक आप लोगों के समागम में तत्वरुचि वाले ही रहे—मेरा सर्वसे यथायोग्य कहना।

आ० सुदि ६ सं० २००८ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय प० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

आपका पत्र श्री भगतजीके पास आया—आपने लिखा सुभीता सर्ववस्तु का होना चाहिये—सो प्रायःजीवोंके अदृष्टाधीन सुभीता मिलही जाते हैं—परन्तु हम मोही जीव विकल्प बिना रहते नहीं। इसलिये कहते हैं मोक्षमार्ग प्राप्त करने म अनेक प्रकार के विकल्प मेटना चाहिये—फिर कहते हैं—जपकरो तपकरो सयमकरो—यह विकल्प है या और कुछ है—परन्तु इससे कोई क्षति नहीं—आगी का जला आगीही सेकता है—हमको तो आप लोगोंके समागमसे शान्ति ही मिलेगी और आगम यह कहता है परका समागम शान्ति का बाधक—मोह की लीलाका माहात्म्य वर्णन करना मोही करनहीं सकता, निर्मोही बोलता नही, जो बोलताभी है वह मोहार्पित प्रवृत्ति का उदय है फिर भी उसकी व्याख्या मोही ही करता है। निलक्षण तत्व है जो अविलक्षण में भेद आरोप करता है।

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

आपका पत्र भगतजी के पास आया। यहांपर बाह्यसामग्री सुलभ है परन्तु अन्त सामग्री की दुर्लभता है—यह लिखना असत्य नहीं—प्राय सर्वत्र ऐसाही देखा जाता है। हमारी सम्मति न कोई माने—अन्य की क्या कहें हम स्वय उसका निरादर करते हैं—हमारी सम्मति यह है परसे परिचय करनाही पापकी जड़ है।

अर्थ अपने आत्माको छोड़ सर्वपरद्रे—परका अर्थ संकुचित सिद्धपर्याय तक लेना।

नोट—परिचय शब्द अर्थ केवल ज्ञान नहीं। जिसमें रागकी मात्रा मिली हो—राग उपलक्षण मोह ▪पका लेना—

आ० व० १४ सं० २००५ आ० शु० चि०
गणेशप्रसादवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय पं० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

मेरा तो यह विश्वास है जो एकेन्द्रिय प्रभृति असंज्ञीजीवों पर्यन्त इष्टानि ज्ञान नहीं होते— समारंभ शान्तिका उपाय जो ज य करते हैं, यह नहीं, क्योंकि शान्ति का कारण तो अशान्ति के कारणों का त्याग करना चाहिये— आत्मा_ण्कारी द्रव्य है— इस द्रव्यान्तर की आत्मीयमान शान्ति चाहते हैं यह नितान्त असम्भव है— अहो पर का निश्चय माननेका अभिप्राय है वहां शान्तिमिले नितान्त असम्भव है—मेरी तो यह सम्मति है आप निज स्वरूपमें ही निवास कराए, सुतरां भेद्यमान के समागम सुलभ हो जावेंगे। सत्समागम भी कल्याणका कारण है यह सर्व औपचारिक कथन है— व्यवहार में व्यवहार ही शरण है—समागमसे स्नेह होता है और वह बन्ध है। अतः किसी का समागम अच्छा नहीं।

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय प० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया सानन्द पहुंचगये—परन्तु सानन्द तो उसमें हां निरन्तर परिग्रह के पंकसे स्वच्छ हो जायोग—मैं जानता हूँ आपका स्वतमश्रद्धा परिग्रह पंकमें निर्मल होनेकी है परन्तु भ्रमरा हटाना तो पड़ेगा—यह पंक आपही को मलीन किये हो सो नहीं हम सबोंको

तो उससे लिप्त हैं। यही कारण है जो हमारा उपदेश अन्धे की लालटेन सदृश है। यह कहना ठीक नहीं अन्धेकी लालटेन अन्य नेत्रवाला को तो दिया देती है परन्तु यहां तो यह नहीं होता। यहां तो दो बधिरों की सी दशा है— अस्तु बात तो परमार्थ में यही है जो इस पथको बहाना चाहिये—

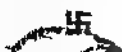
श्रा० सुदि ८ स० २००५ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय प० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने—प्रश्न जो ६०८ निकलते हैं। यह तो अन्तराल की बात है— ६०८ ही मोक्ष नहीं जाते बहुत जाते हैं परन्तु अन्तराल पड़े तब ६०८ जाते हैं— अन ६०८ ही निकलते हैं और ६०८ ही जाते हैं यह नियम नहीं—इसका निर्णय आप विद्वानों में करना हमतो इस विषयमें कुछ नहीं समझते क्योंकि यह हमारा विषय नहीं— हमारीतो यह सम्मति है जो यातायातके विकल्पों को छोड़ सानन्दसे स्वाध्याय करिए—हम अभी ? मास जबलपुरही रहेंगे—और चैत्र मासमें द्रोणगिरि जाने का विचार है वहांसे परचात् सागर जाने का विचार है— कल्याणका पथ तो शांति ■ है— शान्तिका मूलकारण मोहत्याग है। मोहमें यह जीव अनात्मीय पदार्थों में निजत्व की कल्पना करता है और जहांपर परात्मीयता आगयी वहां जो अनुकूलहुए उनमें राग और जो प्रतिकूल हुए उनमें द्वेष स्वाभाविक हो जाता है। अन सबके महान पाप भगवानने इसेही बताया है। अतः अज्ञातक बने सो नहीं मोहछोड़ना ही चाहिये आप लोग विज्ञ हैं विशेष क्या लिखें—

अ० सुदि ४सं० २००३ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी


卐 卐 卐

श्रीमान् महाशय प० शीतलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने—मैं हतभाग्य है—जो उत्तमद्रोणगिरि को छोड़कर सागर जा रहा हूँ। प्रतिदिन उष्णपरीषह और तृषा परीषहका अनुभव कररहा हू— सर्वस्थाना पर ढोल की पोल है— केवल वचनों की कुशलतासे ससार चक्रमे आरहा है—मैं तो उसे धन्य समझता हूँ जो कुछभी ज्ञानकी प्रभुता न रखकर रागादि शत्रुओं पर विजय कररहे हैं। मैं अन्तरंगमे धनका मर्म जानता हू— आज तक न तो अर्जन किया और न पासमें है। रुपया— परन्तु सन्तोष ऐसी बला है जो मेरा सर्वनाश करहता है। मैं ईसरी मे था तब चैन से था। ईसरी छूटी कि दर दर का होगया— न जाने कब तक इन अनर्थों से पिण्ड छूटेगा— आपकी मण्डली सर्वज्ञ है। मैं चाहता हूँ जो उसके चातावरण म रहूँ परन्तु अभी उदय नहीं आया— आपके प्रान्त म सर्वोत्तम स्थान मड़ागाव है परन्तु अभी आप लोगोंने उस उपयोगम नहीं लिया— हमलोग बाह्यप्रभावना चाहते हैं जोकि बाह्यमे सुन्दर दीखती है— अन्तरग प्रभावना तो आत्मगुण विकास से ही है— आजकल परोपकार की ही मुख्यता है चाहे अन्तरङ्गम कुछ न हो— अस्तु मैं द निन बाद सागर पहुँच गा— तब ठीक परिस्थिति का परिचय कर पत्र दूगा—मैं बलात्कार सागर जा रहा हूँ— अन्तरंग से नहीं जारहा हू।

आ शु० चिं०

जेठ सुदि १ स० २००३ गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० हुकमचद जी योग्य इच्छाकार—

आप सानन्दहोंगे—आपके सुपुत्रका स्वास्थ्य अब उत्तम होगा। यहापर गर्मीका प्रकोप अभी पूर्ववत् है। हमारा विचार सौरीपुर बटेश्वर जाने का है। यह ३० मील पश्चिम है। यहा से आगरा ३० मील है। स्थान तो अच्छा मेरठ है किन्तु पहुँच नहीं सक्ते। अब तो उदयाधीन ही परिणमन हो रहा है। क्योंकि पुरुषार्थम

मनोरनादि की आवश्यकता है। सो वृद्धअवस्थाके द्वारा शिथिल होगया। परन्तु इन बलसे परे भी कोई बल है, जो इन सर्व आपत्तियों के सद्भावमें ऐसा कार्य करता है जो अनन्त संसार की प्रभुता क्षणमात्रमें नष्ट कर देता है। वह शक्ति भी प्रत्येक जीवमें है। निगोदिया जीव भी तो उसके बलसे मनुष्य होकर निनधाम का पात्र हो जाता है। तब इस निकृष्टकालके मनुष्य यदि ३ या ४भव निनधामके पात्र हो जावें तो आश्चर्य नहीं करना चाहिये। परन्तु यहांकी तो लीला ही अपार है। हमारे समागम ऐसे निःसत्व हैं जो निरन्तर अपने को कायरताका ही पात्र मानते हैं। पञ्चमकाल है हुण्डावसर्पणी अल्पबुद्धि हीनबल आदि भावनाओं से ओतप्रोत हो रहे हैं। हमलोगोंने यहां तक पुरुषार्थ किया जो पत्थरकी मूर्त्ति—उसमें आदिनाथ की स्थापना कराके आदिनाथ का संदेश—तब नरा बुद्धिमें काम लोग जो मनुष्य पत्थर में आदिनाथ बना सकता है यदि वह मनुष्य अपने चेतनमें भगवान बनाले तो क्या आश्चर्य है। तत्वसे देखो तब वह तो आदिनाथ स्थापनाके हैं यहांतो भावके भगवान होसकते हैं परन्तु सुननेवाला कौन है। अस्तु।

आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय प० हुकमचन्दजी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने। प्रसन्नता इससे है जो इस भीषम समयमें आपलोग अनेकान्तमतका दिग्दर्शन करा रहे हैं। पदार्थ संसारमें अनेक हैं और रहेंगे। फिर भी सर्व अपने २ स्वत्व को लिये हुए परको अचुम्बन करते हुएही सुन्दरता के पात्र हैं—उनमें बन्धकी कल्पना [illegible] जगत जनता है—बन्ध में दो पदार्थ रहते हैं और उनका विलक्षण परिणमन ही बन्ध है। फिरभी दो एक नहीं होते—शब्द पर्याय पुद्गल की है फिर परमाणु में उसका आविर्भाव

नहीं— किंतु सर्वथा यहभी नहीं जो परमाणु में उसका कोई सम्बन्ध नहीं। जो परमाणु पुञ्ज न घावस्थासे प्राप्त होगये उसीम ता श न्द पयाय हैं। क्या ध वपर्यायमें द्रव्यमें परमाणु नहीं हैं ? परन्तु फिरभी केवल परमाणुम शब्द पर्याय नहीं— जैसे रुपये का व्यवहार ६४ पैसे का समुदायम है केवल]] म नहीं— पान आन म रुपयेका व्यवहार नहीं— इसीतरह श न्द पर्यायका व्यवहार स्कन्धमेही होगा— स न्ध आया कहासे—परमाणुपुञ्ज का विलक्षण परिणमनही का नाम स्कन्ध है— एव आत्मा म तो विभाव परिणति है यह केवल (शुद्ध) आत्मा म नहीं—जब उसके साथ मोहनीय का उदय होगा उसी अवस्थामें यह परिणति है—यदि कोई उनका सर्वथा छोड़दे तब रागका उत्पादक कारणही नहीं। तब यह रागादि परणति सामग्रीके अभावमें कैसे होगी समझमें नहीं आता—जैसे कुम्भ पर्यायकी उत्पत्ति मृतिका हीमे है परन्तु कोई कुम्भकारादिसामग्री को त्यागदेवे तब घटपर्याय केवल मृतिकाम स्वयमेव होजाये बुद्धि म नहीं आता—आत्मद्रव्य चेतन है। इसम जो पर्याय होगी उसकी भी व्यवस्था कारणपूर्वक होगी— जैसे ज्ञानमें ज्ञेय झलका—ज्ञानही स्वय उसको विषय करता है अर्थात् जानता है। यह जानतारूप परिणमन ज्ञानहीका है, परन्तु ज्ञेयहीका अस्तित्व नहीं तब परिणमन कहासे आया बुद्धिमें नहीं आता। अत कार्य कारणका अस्तित्व माननाही पड़ेगा— भिन्न २ द्रव्योंमेंभी काय कारणभाव होता है। यहतो एकसमय म भी होता है और भिन्न समय में भी होता है परन्तु एक द्रव्य म जो कार्यकारण भाव होता है यह पूर्व समय म कारण और उत्तर समय में कार्यरूप होता है— गुणों के परिणमन म एक समयम भी होता है जैसे जिसकाल सम्यग्दर्शन होता है उसीकालमें सम्यग्ज्ञान होता है उसी कालमें स्वरूपाचरणचारित्र भी होता है। विशेष क्या लिखें— हम अन्तरंगसे कहते हैं जो आप लोगोंके सहवास को त्यागकर भेड़ियाधसान चाल म इधर उधर

चल दिये। इसमें किसी का अपराध नहीं— एतावता क्या विसीम हमभी नहीं—यह नहीं— हमही अपराधी हैं क्योंकि अपराधीजीव ही न्एडकापात्र होता है – निमित्त कारण नहीं दण्डित होते। अब आपको हम सम्मति देते हैं जो आपलोग एक स्थान पर जहां हैं वहीं धर्मसाधन करियेगा— व्यग्र नहीं भटकिये— जो रहे अच्छा है न रहे खेद न करिये—नवीन आनावे अच्छा है हर्ष न करिये—कल्याण अपना करना है अन्यत्र हो न हो इसका विकल्प नकरिये। मैं आप लोगोंको इस समय बहुत ही उत्तम समझता हूँ इससे इतना लिखने का साहस किया—अन्यथा आपकी इच्छा—

आसाढ सुदि स० २००८ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय प० हुकमचन्द जी योग्य इच्छाकार—

आप सानन्दसे सलावा पहुँचे होंगे आपका ज्ञानही आपका कल्याण करेगा– मेरा तो यह विश्वास है जो बिना सम्यग्ज्ञान के पदार्थोंका ज्ञान नहीं होता और बिना पदार्थ परिचय के श्रेयोमार्ग का लाभ नहीं— विशेष क्या लिखू— मैं तो यह दृढविश्वास निश्चित कर चुका ▮ जो यह आत्मा जितना व्यग्र रहेगा उतना ही ससार म कष्ट पावेगा— जो व्यग्रता को त्यागेगा वह सुखभाजन होगा—सुख कोई अशक्य पदार्थ नहीं केवल परकी मूर्च्छा त्यागही इसका कारण है—मेरा अपनी मंडली से इच्छाकार—

चैत्र बदि ८ स० २००८ आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय प० हुकमचन्द जी साहब योग्य इच्छाकार—

आप सानन्द पहुँच गये यह अत्यन्त प्रसन्नता की बात है जो कुछ हो । समागम हुए है— यद्यपि

मगही कल्याणपथके प्रतिबन्धक है परन्तु जघन्य श्रेणी में जीवकी जो दशा होती है उस अवस्था में यह सर्व उपद्रव अनायास रहते हैं तथा रखना ही पड़ते हैं— यद्यपि वृक्षछायामें बैठा हुवा मनुष्य श्रमको दूर करनेमें सहकारी कारण छायाको मानता है फिरभी मार्गगमन का तत्वत बाधकही गतिरोध को मानता ही है— अब हमारा गति प्राय पक्वपान सदृश हो रही है विशेष क्या लिखें— जो भवितव्य है हो ।।—

सागर — आ० शु० चि०
२७—३—४७ — गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्ध—

पत्र आया समाचार जाने—हमारा यत्न निरन्तर यथा पदार्थकि गुण गोप निवारण पर्य्यवसान हो जावाहै क्योंकि हमारे ज्ञानमें प्राय बाह्यपदार्थ ही तो आरहे हैं। अन्तस्तत्व की ओर दृष्टिको अवकाशही नहीं मिलता— दृष्टि अन्तस्तत्व की अनुभूति कर सकती है परन्तु उसओर उन्मुखही नहीं होना— उन्मुखताका कारण जो सम्यग्गुण सो मिथ्यात्व के उदय में विकसित ही नहीं होता। अत यदि कल्याण की अभिलाषा है तब इन बाह्यपदार्थो के चक्र में न आओ हमारी तो सम्मति यह है जो ऐसा अभ्यास करो जो यह बाह्यपदार्थ ज्ञेय रूप ही प्रतिभासें—अन्य की कथा तो छोड़ो जिसने मोक्षमार्ग दिखाया है वह भी ज्ञेयरूप से ज्ञानमें आवे।

दूसरी — आ० शु० चि०
फा० सु० ७ स० १९९७ — गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मगलसैन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—यथो अपना परिणाम निर्मल करने की चेष्टा करना ही पुरुषार्थ है— असख्यात लोक प्रमाण कषाय हैं—

कल्याणकामार्ग सुलभ है—सरलता चाहिये— जो काम करे निष्कपटता से कर — आप कब आवेगा—हमको आपका दर्शन स्पष्ट था क्योंकि उस प्रान्तसे विवेकी हैं किन्तु हमारी मोहाधनाने यहां ला पटका—परन्तु इसका विषाद नहीं। हमने अपनी परीक्षा करली। आप किसीसे ममता न करना। मैं तो कोई वस्तु नहीं परमात्मा सेभी ममता न करना—यही तत्व है। मोहका निर्मूल करना यही भावना हितकारीहै-हमको बड़ी प्रसन्नता इस बातकी है जो आप अब पहले से बहुत शान्त हैं—मेरी मुजफ्फरनगरवालों ■ दर्शनविशुद्धि कहना।

ललितपुर आ० शु० चिं०
श्रा० ब० १४ सं० २००८ गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसैन जी योग्य इच्छाकार--

पत्र आया संतोष हुआ—सबसे परमार्थ से यही है जो परपदार्थ को पर मानना आपको आप मानना— ज्ञान में ज्ञेय आता है यह तो उसकी स्वाभाविक स्वच्छता है। उसमें ज्ञेय झलकता है अर्थात् ज्ञेय निमित्तक ही यह विकारावस्था को प्राप्त होती है। व्यवहार यह होता है हम ज्ञेय को जानते हैं। आपके पत्रसे यह निश्चय होगया जो आप समयसारके तत्वको समझने लगे हैं। रागद्वेषकी हानि स्वयमेवजानीके होजाती है। हम कुछ नहीं जानते ऐसा स्वप्नमभी खेद नहीं करना चाहिये— तत्वसे विचार करो केवलीके ज्ञान और सम्यग्दृष्टिके ज्ञानमें विशेष अन्तर नहीं। वे भी स्वपरको जानते हैं यह भी स्वपरको जानता है। वे बहुत पर्यायोको जानते हैं यह अल्प जानता है। सूर्य दीपककी तरह ही तो अन्तर है। अब खेद करना हाय हम कुछ नहीं जानते अच्छा नहीं। स्वपरभेद ज्ञानमें अन्य अब क्या चाहते हो — रागादिक होते हैं एतावता सम्यग्दृष्टि के क्या बिगाड हो गया—उन्हें हेयरूपही तो जानता है—औदयिक भाव ही तो उन्हें म परिणामोंको उपादेय तो नहीं

जैसे मुनि महाराजके संज्वलनके उदयमें महाव्रतादि होते हैं, उन्हें करना भी है और यथायोग्य मोक्षभी होता है परन्तु यह मुनि उन्हें उपादेय नहीं मानता— जिस उपादेय नहीं मानता उनके होनेमें परमार्थसे प्रेम नहीं—इसीतरह सम्यग्दृष्टि जीवोंकी विषय कषायके कायाम पद्धति है— उनकी गाड़ी मोक्षमार्गमें तेज चालसे जा रही है— इसकी मन्दचालमें जा रही है अन्तर इतना ही है। अब सर्वप्रकार के विकल्पको त्याग स्वाध्याय करते जाओ। अन्य विकल्प करनेकी चेष्टा न करो तथा यह अच्छा और अमुक निकृष्ट यह सब विकल्पों को त्यागो— आपके पत्रसे हमको प्रसन्नता हुई। आप जब अवकाश मिले आना—निशल्य होकर आना—

ललितपुर आ० शु० चि०

आसाढ सुदि १४ सं० २००८ गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

आप एक बार अवश्य आइये— वर्णी जी को शान्ति होगयी भ्रम हुआ—हमको शान्ति उसको समझते हैं जहां फिर उस विषय का विकल्प न उठे— हमको अब तक शान्ति के रस से वंचित हैं। हां श्रद्धा अवश्य है और यह विश्वास है काल पाकर शान्ति भी मिलेगी— आप लोगोंके चक्रमें आगए यह आप का दोष नहीं हमारी मोहकी दुर्बलता है अन्यथा कोई कुछ नहीं कर सकता। आत्मा सर्वत्र स्वतन्त्र है—परन्तु मोही जीव निरन्तर पर पदार्थों में दोषारोपण करता है— कल्याणकामार्ग कहीं नहीं आपहीमें है। यदि आप इस पर अमलकरोगे तब अल्पकाल में सुख के पात्र हो जावोगे और जो मोहके आवेग में आकर इतस्ततः भ्रमण करोगे तब जैसे वर्तमानमहो वही रहोगे केवल गांठका द्रव्य खो दोगे— हमारी तो यही सम्मति है जो किसीके चक्रमें न आओ अन्यथा जो संसारी जीवों की गति है वही गति होगी।

...ता, सितम्बर सन् १६४८ | आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मगलसैन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— आप जानते हैं हमारा आपसे ...धार्मिक स्नेह है और जबतक हमारे व आपके यह मोह है वहां तक ...यह संसार बन्धन है। जिस अन्तरङ्ग में यह वासना मिटजावेगी ...र मैं आपका और न आप मेरे— हम और आपतो अभी उस पथ ...के श्रद्धालु हैं चर्यामें अभी वह बात नहीं— चर्यामें आनेसे आपसे ...आप ममता मिटता जाती है। समता आती जाती है। एक दिन ...न रहेगी ममता न चाहेंगे समता— न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी— ...जो उपयोग शिष्टाचार में जाता है वह अपनेही स्वरूप सभालन में ...जावे तब परकी अपेक्षा न रक्खो। हम तो स्वयं इस जाल में फसे हैं परंतु आपको हितैषी जान यही कहेंगे आप इसमें मत फसो— ...यदि हमारी सम्मति मानो तब परमेश्वर प्रेम भी त्यागो—भक्तिरूपी ...यह भी कमजोरी का उपदेश है, मोह सद्भाव में ही यह होता है। परन्तु तात्विक दृष्टि से सम्यग्ज्ञानी कुछ नहीं करता, इसका अर्थ यह नहीं जो उसके भक्ति नहीं, परन्तु उसके अभिप्रायकी वही जाने। मेरा तो यह विश्वास है कोई किसी की क्या जाने— अपना २ परिणमन अपने २ में हो रहा है— व्यवहार की कथा विचित्र है।

जेठ सुदि ६ सं० २००४ | आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मगलसैनजी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— आप जो लिख रहे हैं लौकिक शिष्टाचार की यही प्रणाली है—परन्तु परमार्थ से विचारो—शास्त्रीय शब्दों के प्रयोग को छोड़िये— हम जब एकान्त से विचारते हैं,

जो पर पदार्थों में हमारी ममता है वही तो दुःख की जननी है— और भी गहरेपनमें विचारो तो पर को छोड़ो— जो हमारी निज शरीरमें आत्मबुद्धि है यही तो परम ममताका कारण है— शरीरको भी छोड़ो—शरीरमें आत्मीय बुद्धिका कारण अन्तरङ्गमिथ्यात्व है। वही हमारा प्रबलशत्रु है। यदि वह न हो तब हम शरीर को पोषण करते हुए आत्मीय न मानें— अतः शत्रु पर विजय करना ही हमारा कर्त्तव्य होना चाहिये— निजका एकत्व भावना हो गई उसके भव धम होगया—धर्म कोई बाह्यवस्तु नहीं—अन्तरङ्गमें पदार्थमें ममत्वका न होना—यह भाव कब होते हैं जब अन्तरङ्ग अभिप्राय अति निर्मल हो जाता है—उसकेलिये केवल अपनी तरफ देखनाही बहुत है। पर की तरफ देखनाही संसारका कारण है— आत्मा का ज्ञान इतना विशद है कि उसमें निखिल पदार्थ प्रतिबिम्बित हो सकते हैं। परन्तु हमारे देखनेमें राग द्वेष मोह नहीं होना चाहिये—अन्तरङ्गसे न तो आप मुझे चाहते हैं और न मैं आपको चाहता हूं। बहिरंगमें आप हमारे और हम आपके यही बात मोही पदार्थों में लगाना— जहां एकतरफ मोह है वहां दूसरी तरफ उपचारसे जो चाहो सो कहो— जैसे भगवानमें दीनदयालु पतितपावन आदि अनेक आरोप प्रतिभिन्न लोग करते ही हैं।

ज्येष्ठ सुदी ८ सं० २००४ आ० शु० चिं०

गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

महानुभाव इच्छाकार—

मैं आपको पुण्यशाली समझता हूं जो उत्तम महाशयोंके सहवासमें आपका समय जाता है—यद्यपि आत्मा स्वभावतः अद्वैत है—आत्मा ही क्या सर्ववस्तु अद्वैत है—और कल्याण लाभकेअर्थ यह अद्वैत भावना अत्यन्त उपयोगिनी है। एकत्व भावना का यही तत्व है। परन्तु मोहमें हमारी आत्मा इतनी पतित हो चुकी है जो

हम स्वय अद्वैत होकर जगतको अपना माननेका प्रयास करते हैं— ममेदम् अस्याहम् इत्यादि विकल्पों म उलझकर ससार के पात्र बने है—तथापि अहमेकं इत्यादि एकमेवोऽस्म्यहम् इत्यादि पाठ हम पढ़ लेते हैं परन्तु उस रूप होने का प्रयत्न नहीं केवल सम्यग्दर्शनकी कथाकर सतोषामृत का पानकर तृप्ति करलेते हैं और वह भी कथा म ही रह जाता है—यदि परीक्षा करना हो तब जो नरका विवेचन करहा है उसके प्रतिकूल शब्दोंका प्रयोगकरके प्रत्यक्ष उनके भावोका निर्णयकरलो— अस्तु इसमे क्या रक्खा है—जो हो आप लोग जानें या प्रभु जानें— हम ससार को सुलझाने का उपदेश दते हैं, परन्तु स्वय नहीं सुलझते—ब्रह्मचर्याश्रम व्यवस्थित चलता है और चलेगा यह तो ठीक है परन्तु त्यागाश्रम ठीक चलता है इसकी कथा भी नहीं यह क्या बला है—इस प्रान्तको पारकर यदि इस धमकी पुष्टि न की मन में मैं यही समझा जो अभी इस आश्रमकी नीव पड़ी नहीं। अत आवश्यकता त्याग धमकी है— इसके होनेसे एक ब्रह्मचर्याश्रम क्या सबही धर्मके कार्यनिर्विघ्न चल सकते हैं—इसके बिना लवणके बिना भोजनकी तरह कोईभी कार्यकी पूर्ति नहीं मेरा यह विश्वास है जो भोगी हा योगी हो सकता है— बिना भोगके योग नहा मुख्यतया सुखीजीवही कालपाकर वीतरागी होसकता है। यह उत्सग नहीं अपवाद भी है—दुख मे भी भावना अच्छी होती है। प्राय तीर्थंकर स्वर्गसे ही इस भूलोक म अवतीर्ण होते हैं। किन्तु नरकम भी आकर होते हैं। अन्त कहनेका तात्पय यह है जो उस प्रान्तके मनुष्य भोगी बहुत है— अब उन्हें उचित है जो त्याग धमको अपनावें। बहुत दिन गाढ़ी मलाम घी का स्वाद चखा मधुर रसका स्वाद लिया, पुण्य फलको भोगा, आनन्दसे आनन्द वर्दी किया— परन्तु इससे शरीरही को पुष्ट किया— जो परवस्तु है और परसे पुष्ट किया— गारा चूना ईट से मकान ही बनता है आत्मभवन नहीं बन जावेगा— इसम हमारा कोई अपराध नहीं—किन्तु उसको अपनाने—

माना यही हमारी महती अज्ञानता है—अब इसे त्यागदें। ...
त्याग धर्म की आवश्यकता है— आवश्यकता इसकी इस
जो बहुत दिन इसपरको अपना माना, आनन्द यह कार्य नि...
अब इस चोट्टापनको त्यागकर अपने को अपनायें निमग्न संसार
यातनाओं के पात्र न हो। इसके होने आपका जो आश्रम है व
अनायास चलेगा। अथवा आपका न आश्रम है और न आप आश्र
के हैं। यह व्यवहार भी न रहेगा— अथवा आपकी उसमें निज
की कल्पना है तब इस धर्मकी महिमा मे वह भी विलीन होजावेगी
वह क्या विलीन हो जावेगी— श्री गोमट्ट स्वामी यात्राके जाने
विकल्प है वहभी शान्त हो जावगा— जो कुछ आपके पास है व
त्यागो और ब्रह्मचर्याश्रम को ग्रहण अपरिग्रही बनो। श्री गोम
स्वामी जाकर क्या इससे अधिक निर्जरा सम्पादन कर लोगे। सम
है आपकी मडली इस वाक्य से असन्तुष्ट हो जावे परन्तु मेरा
विश्वास है त्यागमे निर्जरा है और वन्दना म पुण्य है— आनथ
अष्टाह्निका पर्व है, देवलोक नन्दीश्वर जाते हैं, पुण्य लाभ सम्पा
करते हैं—यदि हम चाहें तब सयम धारणकर उनसे अधिक ल
ले सकते हैं— किन्तु समय पाले तब। अत आप यहा जो आत
की उपदेश दें जो ब्रह्मचर्य पालन कर दशो तो मात दो— त्यागध
का व्याख्यान करना। यह पत्र सुना देना—यह आशा न कर
जो हमारे आश्रम को यह बलाय मिले—सर्वमण्डलीसे यथायोग्य

आ० शु० चि

गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मगलसैन जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने—आप समयसारका पाठ करते हैं-
उत्तम है— कल्याणकामार्ग दरशाने का निमित्त है— उपादानशा
तो आत्मा म है। इसके उदय होनेही सर्व आपदाओं से आत

सुरक्षित हो जाती है—आवश्यकता हमको आत्मीय परिणति को कलुषित न होने देनेकी है। कोई ससारमें न तो हमारा शत्रु है और न मित्र है—शत्रुता मित्रता की उत्पत्ति हम स्वय करते हैं - जब एक द्रव्य दूसरेसे भिन्न है— फिर हम क्यों न उसको परमाने — क्यों परको आत्मीय मानें— यह मानना मिथ्यात्व है। यही जड़ ससारकी है। आज क्या अनादिकालसे यह जीव इसी मान्यता से दुखी है। यह मान्यता जिस दिन छूट जावेगी उसी दिन ससार बन्धन छूट जावेगा—बन्धनका करने वालाही बन्धनको मोचन कर सकता है। हम बन्धन करनेवाले परको मानते हैं और छुड़ाने वाले भी परको मानते हैं—बन्धन करने वाले स्त्रीपुत्रादि को मानते हैं और छुड़ाने वाले श्री अरिहन्तादि को मानते हैं। इस पर वस्तु की व्यवस्था में अपने अनन्त सुख को खो बैठे हैं—

जबलपुर | आ० शु० चि०
गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत लाला मगलसैन जी योग्य इच्छाकार।

पत्र आया। आपका शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा होगया यह पढ़ कर अति प्रसन्नता हुई और आप रोग आक्रान्त होनेपरभी स्वभाव से च्युत नहीं हुए इसकी महती प्रसन्नता हुई—यह तो पर्याय कारण कूट से उत्पन्न हुई है एकदिन अवश्य ही विघटेगी। इसके रहने का हर्ष नहीं और जाने का विषाद नहीं करना ही महापुरुषों का मुख्य कार्य है— स्वभाव में विकृति न आने पावे यही पुरुषार्थ है। श्रद्धा अटल रहना ही मोक्षमार्ग की आद्य जननी है। आप निश्चिन्त रहिए और जो कुछ दृढ निश्चयकिया है यह न जाने यही महती पुरुषार्थता है— सम्यग्दर्शन होनेके बाद फिर अनन्त ससारकी जड़ कटजाती है फिर वह नहीं रह सकता। अपनी आत्माही अपनेको अनन्तसंसार से पार उतारने वाली है। परावलम्बनही बाधक है। आपके बालक

सुबोध हैं—पुत्रों का यही कर्त्तव्य था जो आपके पुत्रों ने किया। मैं उनको यही आशीर्वाद देता हूँ जो वे धर्मसे इसीप्रकार निरन्तर रहें रहें।

अगहन सु० ५ सं० २००६ आ० शु० चि० गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत ला० मगलसेन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया कल्याणका मार्ग यही है जो परम निरुत्तर कल्पना न करना। आपत्तियां तो औदयिकी हैं, आती जाती रहती हैं। ऐसा उपाय करना जो अब आगे तत्काल न आवें— मूल उपाय यही है कि उदासीनवत् कल्पना करता जावे— विशेष क्या लिखूं—संतोष से जीवन बिताओ।

अ० सुदि १२ सं० २००६ आ० शु० चि० गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत ला० मगलसेन जी योग्य इच्छाकार।

पत्र आया समाचार जान। आपकी श्रद्धा निर्मल है यहीकल्याण की जननी है। आत्माम जो हमने जाननकी शक्ति है वह निरन्तर रहती है। तत्सम परिणमन रहे इससे हानि नहीं। हानि का कारण परम निजत्व कल्पना है यही संसार की जड़ है— यहांतक साम्य भाव हैं यही मार्ग यह निज स्वरूपमें रहना है अगाड़ी बड़ा फँस गया। फसाने वाला स्वयं विकृतभाव है—आपत्ति आने पर स्वरूप में च्युत न होना चाहिये। आप जानते हैं नारकी कितनी वेदना में मस्त रहते हैं पर तु वे भी उस अवस्थामें स्वरूप लाभके पात्र हो जाते हैं। अत शारीरिक वेदना अन्तर दृष्टि का बाधक नहीं फिरभी [illegible] म आते रहते हैं। परपदार्थ का अणुमात्र भी नहीं।

अगहन सुदि २ सं० २००६ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय मंगलसेन जी इच्छाकार—

आप सानन्दसे जीवन यात्रा समाप्त करना— किसी की चिन्ता न करना। आत्मा एकाकी है, मोहके वशीभूत होकर नानायातनाओं का पात्र होरहाहै। आप तत्वज्ञानी हैं। सर्वविकल्प त्यागकर अन्तिम कार्य करना। मुझे पूर्ण श्रद्धा है जो आप सावधानपूर्वक उत्सर्ग करेंगे। आपके बालक समर्थ हैं। आप स्वयं समर्थ हैं। यही समय सावधानी का है। मूर्च्छा त्यागना। मैं तो कोई वस्तु नहीं, परमात्मा में स्नेह त्यागना।

अगहन व० ६ सं० २००६ आ० शु० चि०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत ला० मंगलसेन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आए समाचार जाने— मेरा शरीर निरोग है। यह गल्प है जो मेरा फागुन में असाता होगा—आप चिन्ता न करें संसारमें शान्तिका मूल चिन्तानिवृत्ति है। मेरी तो यह भावना है जो अपने स्वरूपको छोड़ अन्यत्र मनको न जाने दो। मोक्षमार्ग का मूलकारण परमें निज कल्पना का त्याग है। जिसकालमें मोहका उपशम हो जावेगा रागद्वेष अनायास चले जायेंगे। आपतो ज्ञानी हैं। सर्व पदार्थ भिन्न,हैं फिर अपनाना कहा का न्याय है–निसदिन अपनाना जावेगा अनायास यह आपत्ति टल जावेगी। आप भूलकर अभी आने की चेष्टा न करना।

पौष सु० १९ सं० २००६ आ० शु०

श्रीयुत रूद्रचन्द्र व सनतकुमार जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आया समाचार जाने। श्री मंगलसेन जी का स्वास्थ अच्छा होगा। यदि स्वास्थ अनुकूल न हो तब रत्नकरण्ड श्रावकाचारमें जो मृत्यु महोत्सव है उसे अच्छीतरहसे श्रवण कराना। वहतो आपके विनाहैं। आपका कर्त्तव्यहै जो आप उन्हें अच्छे परिणामोंमें धर्म श्रवण करावें—मोहकेद्वारा हम संसार समुद्रमें अनादिकालसे भ्रमण करतेहैं। अन्यत्पाय नहीं केवल मोहपर विजय प्राप्त करनाही संसार के उद्धारका उपायहै। इसका जीतना कठिन नहीं। भेदज्ञानही रामबाण औषधिहै। आपका मंगलसेनजीसे हमारी इच्छाकार कहना तथा यह कहना जो आपने आजन्म तत्त्वज्ञानका अभ्यास कियाहै उसके फलका अवसर आयाहै। रंचमात्रभी प्रमाद न करना तथा अभक्ष्य औषध और इ जैक्शन न लगाना। आयुकी स्थिति वृद्धि करनेवाला कोईनहीं। पर्याय दृष्टिसे सर्व अनित्यहैं। मंगलपाठ आदि द्वारा सावधानी देनेमें असावधानी न करना पत्र शीघ्र देना।

आ० वदि ८ सं० २००६ आ शु० चिं०

गणेशवर्णी

श्रीयुत महाशय ला० मंगलसेनजी योग्य इच्छाकार—

पत्रआया समाचार जाने—कल्याणका मार्ग कहीं नहीं अपनेमें हीहै। आवश्यकता श्रद्धा निर्मल परिणामोंकी है। जिसकी श्रद्धा दृढ़है उसका उत्थान अनायास होजाताहै। अनादिकालसे हमारी प्रवृत्तिपर पदार्थोंमें रही उन्हींसे आत्माका कल्याण अकल्याण मान कर मोह राग द्वेष द्वारा अनन्त यातनाओंके पात्रहुए। अत इन पराधीनताके द्वारा हुए संकटोंसे यदि अपनी रक्षा करनेका भावहै तबअपनेको केवल जाननेका प्रयत्न करो। दृष्टि बदलनाहै। समीप ही श्रेयोमार्गहै। पराधीनता त्यागो। शुद्धचित्तसे परामर्शकरो। यहीं भ्रमणकी आवश्यकता नहीं। उष्णजलको शीत करनेके अर्थ उष्णता दूरकरनेकी आवश्यकता है शीतता तो उसकी स्वभा—

निक वस्तुहै—इसी तरह आत्मामें शान्ति स्वाभाविक है परन्तु अशान्तिके कारण मोहादि शत्रुओं को दूर करनेकी आवश्यकताहै, शान्ति तो अन्तस्तल म निहित है।

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला मगलसैन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने— भाईसाहब कल्याणका मार्ग तो जहां है वहाही है— यह तो हमारी आपकी कल्पना है जो पर भी कारण है। इसका निषेध नहीं परन्तु कार्यसिद्धि कहां होती है इस पर दृष्टि पात देना चाहिये— सामग्री कायका जनक है किन्तु कार्य कहां होता है यह भी विचारणीय है। आपको सानन्द से स्वाध्याय करिये और जो कुछ परिणतिमे रागादिक हों उनमें तटस्थ रहिये। यही उनका त्याग है। अनन्त जन्म बीत गए। हमने अपनी परिणति पर अधिकार न पाया उसीका यह फल है जो अनन्त ससारकी यातना भोगी—उसका खेद व्यर्थ है। जो गयी सो गयी वर्त्तमान पर्यायको अन्यथा न जानेदना चाहिये यही हमारा आपका कर्त्तव्य है। जर अच्छा होगा।

अगहन व० ६ स० २००६

आ० शु० चिं०
गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० मगलसैन जी योग्य इच्छाकार—

पत्र आया समाचार जाने—अब सर्वविकल्प त्यागो और जो मार्ग अंगीकार किया है उसी पर दृढ़तम रहो। आप स्वय अपने आपको जाननेकी जो श्रद्धा है उसीके अनुकूल स्थिति बनाओ— अनन्त जन्म बीतगये कुछ पल्ले न पड़ा, पल्लेपड़े क्या? पानी परदी है उसके द्वारा कैसे शान्ति मिल सकती है।

जैन

सुखसे निराओ— आपका पुत्र अनुकूल है इसमें वाह्यचिन्ता तो आपको कोई नहीं। बाहर जानेका विकल्प त्यागो केवल रेलकी यातना और द्रव्य व्यय होना है। हमारा विचार अब १ स्थान पर रहनेका होगया है— गृहस्थोंका समागम सुखप्रद नहीं— आपको जहांतक बने स्वाध्यायमें मन लगाओ यही शान्तिका मूलमार्ग है— हम बराबर पत्रव्यवहार करते रहेंगे। अथवा इस पत्रव्यवहारमें भी समय मत लगाओ— चाहे आत्मचिन्तन करो चाहे अन्य पदार्थ आलम्बन आने रागद्वेष नहीं होना चाहिये— इतनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर लो जो श्री परमेष्ठीकी भी स्मृति न आवे—यह होना ही कठिन है।

पौष सुदि ९ सं० २००६ आ० शु० चिं०

गणेशवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय लाला मंगलसैन जी योग्य इच्छाकार—

आपका स्वास्थ्य अच्छा है संयमही सिद्धिका मूल है। अब शीत कालमें एक स्थानपर ही रहना और बाह्यपरिश्रम विशेष न करना। समय पाकरही परमकल्याण होगा— तथा मेरा तो निजका यह विश्वास है जिसने मोहपर विजय प्राप्त करली, उसने संसार पर विजय प्राप्त करली। सबसे प्रबल अरिके विजय होनेपर शेष अरि कोई रहताही नहीं। अन्य कर्मोंमें अरि कल्पना सहकारिता से है। परमार्थसे शत्रु तो मोह ही है। धन्य है उन महानुभावोंको जिन्होंने उस अरिको ही अरि समझा, जिसने इसपर विजयपाली वही परमात्मा का उपासक और निग्रंथ पद का पात्र होता है। यह भी एक कहना शुद्ध दिनका है वह स्वयं परमात्मा है। परमार्थ से यह वही है उसकी क्या कहना मोही का काम है वह अनिवाच्य है—

अगहन सुदि ६ सं० २००६ आ० शु० चिं०

गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत इन्द्रकुमार जी व श्रीयुत मन्नकुमार जी योग्य दर्शनविशुद्धि।

पत्र नहीं आया सो देना। ला० मक्खनसेन जी का स्वास्थ्य अच्छा होगा। धर्मात्मा जीव हैं अतः उनकी वैयावृत्यमें त्रुटि न न करना। निरन्तर स्वाध्यायमें रत्नकरण्डमें सुनाना। पुत्र का यही धर्म है जो पिताके धर्मध्यानमें साधक हो। यों तो संसारमें प्राणीमात्र विकल रहते हैं किन्तु ऐसे भी हैं जो मधारको मिटा देते हैं। मक्खनसेन मिटानेवालों में हैं। इसमें तो उनने निरन्तर धर्म स्नेह किया। मुझे विश्वास है जो उनका परिणाम निर्मल ही रहता होगा। रोग तो अघातिया कर्मके उदयसे होता है जो आत्मगुणका घातक नहीं। किन्तु इन अघातियामें स्थिति अनुभाग देनेवाला कषाय ही है अतः अब हम अघातिया पाप प्रकृतियोंके उदय आने परिणामों में विशुद्धता रखने का प्रयत्न करें। ऐसा करनेसे उन पाप प्रकृतियों का अनुभाग न्यून हो जाता है जो औषध से अधिक उपयोगी है। यही कारण है जो हमलोग रोगादिक के लिए प्राय धर्मकार्य करते हैं। धर्मका मर्म समझना कठिन है। पत्रोत्तर शीघ्र देना।

आ० शु० चि०

प व० ११ सं० २००६ गणेशप्रसाद वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय चेतनलालजी योग्य दर्शनविशुद्धि—

हमने जहांतक अनुभव किया है मूर्च्छाही संसारकी जननी है—त्यागका महत्व बाह्यत्यागमें ही प्रकाशमें आता है। चावलका मल तुष दूर करने में होता है—फिर भी अन्तरङ्ग व्यापार की अपेक्षा है—स्वाध्यायभी करो और संयम मूर्च्छा त्यागो—

गया आ० शु० चि०

३—१०—५३ गणेशवर्णी



भाग २

श्रीमान् ब्र० बाबाजी जीवानन्द जी सादर इच्छाकार।

परच—आपका पत्र आया। आपका स्वास्थ्य अच्छा होगया यह जानकर प्रसन्नता हुई।

दुनियाके अणु अणुसे सर्वआत्माओंसे भिन्न अपनेआपको चैतन्यमय अनुभव करके निराकुल रहिये। आप स्वयं सत् हैं, अविनाशी हैं, चैतन्यस्वभावी आनन्दमय हैं किसी चिन्ता का स्थान ही नहीं। परपरणति में अपना सुधार बिगाड़ नहीं, अपने में रत लीन होनेका प्रयत्न होना चाहिये। ब्र० निर्मलानन्द जी ब्र० जयानन्द जी का इच्छाकार।

इन्दौर आ० शु० चिं०
२६-४-४३ मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् ब्र० बाबा जी जीवानन्द जी योग्य इच्छाकार।

परच—आपके पत्र आये, आपको अभी पूरा आराम नहीं हुआ। आप धैर्य रक्खें सर्व अच्छा होगा। आत्मा चैतन्यपुञ्ज है। अपने विषयमें पर्यायमात्र की बातही ध्यान में न लाना। मैं अनादि अनन्त अखंड चैतन्यपिण्ड वस्तु हूँ जगत के किसी द्रव्य से मेरा सम्बन्ध नहीं ध्यान, भावना रहना चाहिये। भावना भवनाशिनी। यह अभ्यास बढ़ाना चाहिये कि कोई कुछ कहे अपने को चैतन्यमात्र अनुभव करके यही सोचना चाहिये कि मुझे किसी ने कुछ नहीं कहा। कह ही नहीं सकता। देवकीनन्दन वृजनन्दन को दर्शनविशुद्धि।

इन्दौर आ० शु० चिं०
१०-६-४३ मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् धर्मवत्सल सर सेठ हुकमचन्द जी धर्मस्नेह इच्छाकार—

परच—आपका तार मिला– आपका उभयस्वास्थ्य उत्तम होगा– चातुर्मास के विषय में मैं ज्येष्ठमास तक कहीं के लिये नहीं कहता एसा मेरा सकल्प है। परन्तु आपके धर्मस्नेह के कारण इन्दौर का ध्यान है। पूर्ण विचार होगया तब आषाढ मास में समाचार दूगा।

आपका परिणमन ज्ञानोपयोग में प्राय होता ही रहता है। यह ही एक आत्मा के लाभ का व्यापार है। अपनेको मनुष्य धना गरीब, त्यागी, श्रावक, शास्त्रज्ञानी, मूर्ख, किसी जातिवाला, शरीर, रूप, यशसहित, यशरहित आदि किसी रूप न मानकर ज्ञातारूप अनुभव करते हुए अन्तर में आराम पाना शाश्वत आनन्द लाभका अति निकट मार्ग है। मडली एवं परिवार धर्मस्नेह कहिये।

शिमला आ० शु० चि०
२२—५—५२ मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान् सर सेठ साहब योग्य धर्मस्नेह—

परच—हम राडना सकुशल आगये— आपका धर्म ध्यान निज अखड ज्ञान सामान्य की दृष्टि से पुरस्कृत होता हुआ होही रहा होगा – श्रीयुत भैया राजकुमार सिंह जी आदि परिजनोंको दर्शन विशुद्धि –श्री मा साहब को धर्मस्नेह कहियेगा— श्री ब्र० जीवानन्द जी व जयानन्द जी हस्तिनापुर यात्रा को गये हैं। जगतके व्यवहारों का उपयोग दृष्टि-आत्मा के लिय निसार है— व्यवहार में रहकर भी निज सहजरूप दृष्टि रहे यह सम्यग्ज्ञान से ही होगा। सर्व तथ्य हैं परन्तु बाह्य द्रव्यमें अभेद कल्पना नितान्त अतथ्य है। मेरे ध्यान से अध्यात्म हितमार्ग के अन्वेषण की दृष्टिमें नयके ४ प्रकार हैं— (१) शुद्ध निश्चयनय, (२) अशुद्ध निश्चयनय, (३) व्यवहारनय (४) उपचार— इनमें उपचार तो बिल्कुल अतथ्य है। शेष तीनों तथ्य हैं जिन्हे हम इन विषयों में नियुक्त कर सकते हैं— (१) द्रव्य

का सहजस्वरूप अर्थात् सामान्यरूप है— (१) विभाव में निमित्त कुछ करता नहीं, (२) विभाव निमित्त बिना होता नहीं। इसमें पहला

हितप्रद है। कोई विशेष पत्र मुख्तयार वर्णीजी साहब का आवे तो मुझे भी उन शिक्षा के परिणामों से सूचित करते रहियेगा— अपने स्वास्थ्य के विषय में लिखिये— ठीक होगा—

स्नेहा — आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

(श्रोपरेशन के समय)

श्रीमान् सर सेठ साहब हुकमचन्द जी जैन योग्य धर्मस्नेह—

पूर्ण स्वस्थ होगये होंगे संसारके स्वरूपका और आत्माके स्वरूप का आपको दृढ़तम ज्ञान है ही—आशा है आप प्रत्येक परिस्थितियों में शुद्ध चैतन्यस्वरूप की ओर के अवलोकन से प्रसन्न रहते रहे होंगे। कर्मोदय प्राय दुर्निवार है फिर भी ज्ञानी कर्मोदयोपयोग में एकत्व भाव न होनेसे अन्तरङ्ग में अनाकुल ही रहते हैं। आप अपनी प्रसन्नता का पत्र देना— सर्वपरिवार को दर्शन विशुद्धि—

जयपुर — आपका हितचिंतक,
१०-१०-५३ — मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत बाबा जी चीदानन्द जी मास्टर इच्छाकार—

परच— आपका पत्र आया वृत्त अवगत किया। आपका पैर

अच्छा होगया सो सबको हर्ष है। अब आप जितनी जल्दी होसके मार्चके बाद जल्दी आना। यह बात तो कुछ अंशों में ठीक ही है कि आपको समागम बिना धर्मध्यान का लाभ नहीं हुआ। परन्तु वेदना में भी कहाँतक धर्मध्यान हो सकता है यह बात भी आप जानते हैं। वेदना तो सम्यक्त्वमें निमित्त हो जाती है। उपसर्ग तो शुक्लध्यान को भी समीप ला देता है। जगत की अशरणताका भाव भरनेका अवसर था। क्रमबद्धपर्याय अब जो हुई होनी थी निकल गई। आत्मीयआनन्दमें प्रमुदित रहिये। मजनन्दन को दर्शनविशुद्धि।

देहरादून आ० शु० चिं०
२४-३-४३ मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत बाबा जी जीवानन्द जी मास्टर इन्चार्ज—

परम—आपका पत्र आया वृत्त जाने— आप १ अप्रैल को अरहन्तनगर जारहे हैं सो अच्छा है। अब हमारा विचार श्री बड़े वर्णी जी के पास कुछ दिन बाद जाने का हो रहा है देहरादून में जाने का विचार है करीब ८-१० दिवस। तबतक आपभी कुछ स्वस्थ हो जायेंगे। ला० गेन्दनलालजी दर्शनविशुद्धि कहना—धृतनन्दन को भी दर्शनविशुद्धि कहना मजनन्दन की सेवा प्रशंसनीय है। जगत को अनित्य असार अहित समझकर इससे लक्ष्य हटाकर इन्द्रियों को भी संयमित करके अपने आपके अनुभव अमृत द्वारा अमर बने। पत्र देना। और यह लिखना कि आप लाठी के सहार कितना चलने लगे हैं। शेष सबकुशल—बा० ऋषभदास जी सानन्द होंगे। उनकी उदारता सम्मान के योग्य है।

देहरादून आ० शु० चिं०
मनोहर

卐 卐

श्रीयुत भाई प्रेमचन्द जी योग्यदर्शन विशुद्धि—

आपका धर्मसाधन ठीक हो, शांति लाभ हो। आप यदि २ वर्ष को ब्रह्मचर्य सपत्नीक रखसकें तो आपका व स्त्री का व नवजात शिशु का तीनों का कल्याण है। इससे आपका बालक बहुत पुष्ट और सुन्दर विचारवाला बनेगा। बालक बालिकाओं को आशीर्वाद।

धन ऐश्वर्य सब पुण्यका फल है। पुण्य उसी पुरुष के बलशाली होता जो धर्मरूप प्रवृत्ति करते हुए भक्ति, ज्ञान, संयम आदि शुभ प्रवृत्ति रखते हैं।

चातुर्मास कहां होगा यह निश्चय नहीं। इन्दौर स पंचायतका व सेठ हुकमचन्द जी का भी विशेष आग्रह हो रहा है।

शिमला आ० शु० चि०
मनोहर वर्णी

卐 卐 卐

श्री भाई धर्मवत्सल ला० ताराचन्द जी महानुभाव
योग्यदर्शन विशुद्धि

परच-आपका स्वास्थ्य उत्तम होगा। मदनतर मेरास्वास्थ्य अब ठीक है—परिवारजनों को दर्शन विशुद्धि। धर्म आत्माकी साहं क्षेमरहित परिणतिको कहते हैं। बाह्य प्रवृत्तिया व्यवहार धर्म है। क्रोध, मान माया, लोभ पर विजय प्राप्त करना ही शान्तिमार्ग है। आजकल आडम्बर विशेष है। सत्य स्वरूपकी ओर झुकाव नहीं के बराबर अर्थात् धर्म है। अतः एक अपने नैर्मल्यसाधकरूप धर्मसे प्रयोजन होना यह धुन हो जाना सत्पथ है। यह आप ही म है केवल दृष्टि देना है। आपके सद्व्यवहार का मुझपर स्वास्थ्यवर्धक प्रभाव पड़ा।

कांधला आ० शु० चि०
२४—५—५१ मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् धर्मबन्धु ला० ताराचन्द जी योग्य दर्शनविशुद्धि

पत्र—आप सकुशल धर्म साधन करते होंगे। यहां देहली कल आगया था। श्री १०८ आचार्य सूर्यसागर जी विद्वान और शांत है। हम सब यहां ५ क्षुल्लक है ब्रह्मचारी भी ५—६ हैं। अभी कुछ दिन यहां रहेंगे। यहां एक भाई पूछते हैं कि ढोलावाले महाराज कहांपर है। मुझे पता नहीं आपको पता होतो लिखना। संसार एक विचित्र परिस्थान है। आत्मा ज्ञानमात्र है, उनका रहे, संसार चर्चाकी परवाह न करे तो आत्मा अपने सत्य लक्ष्यपर पहुँच सकता है। समाजके लोग मुनियोंकी भी चर्चा करनेसे दूर नहीं होवे। मुझे उन महाशयके इस प्रश्नमें कि ढोलावाले महाराज कहां हैं सुनकर दुःख हुआ। जिनको पूछना है उनका सीधा नाम लेकर पूछतेतो क्या उनका बिगड़जाता समझमें नहीं आता। आपके धर्मप्रेमको धन्य है। परिवारजनोंको दर्शनविशुद्धि कहना। मेरा स्वास्थ्य अब ठीक है। आप चिन्ता न कीजिये।

देहली आ० शु० चि०

मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान भाई ला० ताराचन्द जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आपका पत्र आया समाचार ज्ञात। हम लोग सकुशल इन्दौर आगये। आपके लिये अध्यात्मपत्रसंग्रह भेजा है मिला होगा।

अपना समय कुछ आजीविका व्यापारमें बिताकर शेष अधिक से अधिक समय स्वाध्यायमें लगाना। जिनवाणी सच्चे उपदेश द्वारा मोह निवृत्तिमें साधन होगी।

परिवारको दर्शन विशुद्धि—निरन्तर अपने सत्य स्वरूपके लक्ष्य पर प्रयत्न रखना। निज आत्मा अखंड गुणपूर्ण अजरअमर और

अविच्छिन्न है । उसी के ध्यानमें भव्यजीव मुक्तिका मार्ग पाते हैं ।

२३—६ ५२ आ० शु० चि०

मनोहर वर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान भाई ला० ताराचन्द जी जैन योग्य दर्शनविशुद्धि—

आपका स्वास्थ्य ठीक होगा । आपकी पद्धतिका मुझे बारबार ध्यान आता है । आपकी परिणति और त्यागियोंके प्रति परिणाम श्लाघ्य है ।

भाई जी—आप सामायिकका अभ्यास जरूर करिये । सामायिक—१ जाप, बारह भावना का विचार अपने में बातचीतके रूपमें कुछ उत्साह पैदा करता, व कुछ समय सब प्रकारका विचार छोड़कर शान्त बैठना यही सामायिकके प्रोग्राम है ।

शारीरिक स्वास्थ्य इस समय ठीक नहीं है । कुछ थोड़ासा बुखार है तथा नजला जुखामका बहुत जोर है जिसमें गलेमें तथा पीठ हाथमें दर्द है, सिर भारी सा है । यद्यपि स्वास्थ्य खराब है तो भी व्यग्रता बिल्कुल नहीं । आप चिन्ता न करें । जल्दी ठीक होजायेगा आप सानन्द स्वाध्याय करियेगा- अभी हमारा विचार कांधला ठहरने का है । दो हफ्तेका प्रोग्राम कांधले का है । बीचमें २—३ दिनको बुढानेडी म मन्दिर बनने की स्कीमके लिए जो कैरानेके पास है शायद जाना पड़े । वेडीके भाई आये थे । उन्होंने इस मंदिर बनजाने की प्ररणा की थी । वहां २० घर जैनों के हैं पर मन्दिर नहीं है ।

पूज्य श्री १०८ आचार्य सूर्यसागर जी महाराज मेरठ किस दिन आवेंगे और अभी कहां हैं जरूर समाचार भेजियेगा। पत्र भेजने का पता यह है—

मनोहर वर्णी हि० दि० जैन मंदिर कांधला ।

(जि० मुजफ्फरनगर) खास कांधला ।

सब भाइयोंसे दर्शनविशुद्धि कह भी सेवेगा।

आपका हितचिन्तक
मनोहर

श्रीमान् भाई सा० ताराचन्द जी एम० ए० योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आज आपका पत्र मिला — श्री आचार्य जी के स्वास्थ्य का समाचार जानकर बहुत खेद हुआ। श्री आचार्य नमिसागर जी का स्वास्थ्य यदि कुछ अधिक खराब हो तारद्वारा खबर देवें। श्री बड़े वर्णी जी का भी आचार्य जी को प्रणाम कहना। उन्हें भी इस समाचारको सुनकर बहुत खेद हुआ और यही भावना है कि महाराज का स्वास्थ्य शीघ्र अच्छा हो।

श्री आचार्य महाराज जी को मेरा नमोऽस्तु कहना। मुझे उनके दर्शनों की बहुत अभिलाषा थी पर अभी पूर्ण नहीं हो रही। आशा है उनके दर्शन हो जावेंगे। सर्व धर्म बुआको दर्शनविशुद्धि। लाला जुगमन्दरदास जी आदि सब सकुशल होंगे। मेरी हार्दिक भावना है कि श्री आचार्य महाराज का शीघ्र स्वास्थ्य लाभ हो।

आ० शु० चि०
मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्री भाई रतनलाल जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आपका पत्र आया। एक जाप्य आप प्रतिदिन करते ही होंगे, यदि नहीं तो अवश्य करना। समय अधिक न हो तो पहले ६ बार णमोकार मंत्र पढ़करके ॐ नमः सिद्धेभ्यः को १०८ बार जप लेना—पश्चात् छहढाला की कोई ढाल या अन्य पाठ या १ भजन पढ़कर ६ बार णमोकार मंत्र पढ़कर समाप्तकर लेना। यह बात नरेश भाई आदि को भी कह देना।

शिमला
६—६—५२

आ० शु०

श्री भैया रतनलाल जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

परंच—आपका पत्र आया।

आयुबंध से मतलब नरकायुबंध तिर्यगायुबंध आदि से है उससे नहीं और गतिबंधसे मतलब नरक गतिबंध आदि से है। आयुबंध टूट नहीं सकता। देवायुबंध तब देव ही होगा। गतिबंध का परिवर्त्तन हो जाता। आयु का काम तो उस भवमें आत्मा को रोके रहना है, गति का काम उस भवके अनुकूल भाव होना है। गतिका उदय आयुको मुरत लाकता है।

भैया, जैसे प्रशंसाका आनन्द मिलना है तैसा निन्दा का भी मिलना चाहिये तभी धैर्य और स्वभावनिश्चलताकी मजबूती होगी। आत्माका लक्ष्य और परिणाम भ ष्ट होना चाहिये।

परिवार को दर्शनविशुद्धि।

इन्दौर — आ० शु० चिं०

१८—८—५२ — मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई सा० रतनलालजी योग्य दर्शनविशुद्धि—

परंच—आपका स्वास्थ्य अध्ययन धर्मसाधन ठीक होगा।

भैया आत्मा का तीन कालका स्वभाव क्या है? केवल प्रतिभा सुरूप ज्ञाता दृष्टाकी स्थिति, यह लक्ष्यम रहे और यहाका वास व समागम क्षणिक है ऐसा ज्ञानम रहे तो आत्माकी अपूर्व उन्नति होगी।

अपने स्वास्थ्य का समाचार देना व ध्यान रखना आजकल बरसात का मौसम है पथ्य सुपथ्य भोजन पर ध्यान रखना—संसार संसार ही है, अन्य है, कभी भी कोई प्रकार की आकुलता न लाना। हमारी भावना है कि आपको वह ज्ञानपद प्राप्त हो जिसमें आपद रहती ही नहीं।

इन्दौर आ० शु० चि०
२३—८—५२ मनोहर

卐 卐 卐

श्रीभाई रतनलाल जी—योग्य दर्शनविशुद्धि।

परंच—आपका धर्मध्यान ठीक चल रहा होगा। परिवारजनों को दर्शनविशुद्धि—भाई नरेशचन्द जी को दर्शनविशुद्धि। दोनों भाई प्रीतिपूर्वक रहो और इस असार अनित्य संसार में आत्मज्ञानी बनकर अपनी सहज परिणति के अधिकारी बनो जिससे सदाके लिये सुख पाओ यही मेरी तुम दोनोंके लिये व सबके लिये भावना है।

देहरादून आ० शु० चि०
२८-४-५२ मनोहर वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई रतनलाल जी योग्य दर्शनविशुद्धि।

लोकमें यस जीवन निभाना है इतना ही काम है। परन्तु अपने लिये ऐसे ज्ञानमें प्रवेश और स्थिरता पाना- जिससे सब क्लेशोंका मूल यह परपदार्थ शरीर सदा के लिये वियुक्त हो जाता है। यह कार्य सामने है, मुख्य है।

सहना आ० शु० चि०
१५—११—५२ मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भैया रतनजी—योग्य दर्शनविशुद्धि—

परंच—आपका पत्र आया— सब भाइयों को दर्शनविशुद्धि छात्रवृन्द को आशीर्वाद।

कार्तिक के बाद आप अपने अध्ययन पर बहुत विशेष ध्यान रखना। शुद्धोपयोग से प्रयोजन रखना
निरोध है। अपनेमें कषाय भी कभी उत्पन्न

अपने को ही न्या लेना और क्षण भर में आत्मस्वरूप सोचकर उसे निकाल देना।

इन्दौर
११—१०—५२

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भैया रतन — योग्य धर्मवृद्धि —

परंच—आपका पत्र आया। मनुष्य जीवन में बाल्यावस्था में ही सम्ज्ञानपूर्वक धर्मसंस्कार का होना सुभवितव्य का सूचक है। कुछ भी विवेकशालियों को जो बुद्धि वृद्धअवस्था में होती है उस बुद्धि का बहुत पहिले ही होजाना सची सावधानी है। आत्मा को एकाकी ही है। अपने को एकाकी समझना "गहा पै गृह में न रचै ज्यों जलमें भिन्न कमल है" की चरितार्थता का मूल है— ऐसा प्रयत्न होना चाहिये जो क्रोध अपमान के प्रसंग आने पर भी क्षोभ न आवे। यदि कुछ मनमें क्षोभ आ भी जावे तो वचनों से प्रदर्शित नहीं करें क्योंकि भीतरी बात तो २ मिनट बाद ही अपनेको समझाकर अलग की जा सकती है। प्रदर्शन से क्षोभ का तांता बढ़ जाता है। आप सुबोध पुरुष हैं।

इन्दौर
७—१०—५२

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० रतनलाल जी जैन— योग्य दर्शनविशुद्धि —

परंच—आपका पत्र आया— "निजपरवसहेण में" प्रथम शब्द का श्रेष्ठ अर्थ हो जाता है। चेदणकम्मादाण—कर्म २ तरह के हैं चेतनकर्म, अचेतनकर्म। ज्ञानावरणादि ८ कर्मों को तो प्रकृतिभेद के १४८ हैं तथा अनेक हैं ये अचेतनकर्म हैं। तथा कर्मों के उदयसे जो आत्मामें विभाव पैदा होते हैं वे चेतनकर्म कहलाते हैं—निश्चयनय से चेतनकर्म का कर्ता आत्मा है और व्यवहारनय से उन चेतनकर्मों

के निमित्तके जो पुद्गलकर्म बधते हैं उन अचेतनकर्म (ज्ञानावरणादि) का कर्त्ता है।

अनात्मभूत लक्षण— दंडीका लक्षण दंड-यहां दंडका अर्थ लाठी, बेंत।

सांव्यवहारिकप्रत्यक्ष—जिसे हम व्यवहारमें कहाकरते हमने प्रत्यक्ष देखा अप्रत्यक्ष सुनाआदि। यह सब व्यवहारमें कहाजाने वाला प्रत्यक्ष सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष है वास्तवमें तो यहसब मतिज्ञान है और मतिश्रुत परोक्ष कहेगये हैं।

धर्मशिक्षासदन के अल्पविद्यार्थियोंको आशीर्वाद।

मढ़या आ० शु० चि०
नवम्बर सन् ४२ मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० रतनलालजी योग्य दर्शनविशुद्धि—

मुझे इस बातका दुःख है कि तुम्हारे लिखनेपर भी मैं धर्म शिक्षासदन के अधिवेशनमें दिल्ली न भेज सका।

१—किसीके सम्बन्धमें किसीको बुरे समाचार आदि कहनेमें उसके हितका ध्यान रखना—मनुष्य जीवनमें ऊंचे उठनेका यह भी एक मत्र है।

२—जिस बातके कहनेमें स्वपरकी भलाई न हो अहित हो वह बात नहीं कहनेमें आत्मबल प्रकट होता है।

३—किसी भी परिस्थितिमें हो मधुर वचन हितकारी बोलना ही मानवधर्म है।

४—मनमें सबका भला सोचना वचनसे हितमित प्रियवचन बोलना, कायसे जहां तक बनसके दूसरेकी सेवा करना शुभोपयोग है यह दोनों भवकी स्थितिका कारण है।

तुम भव्य पुरुष हो। जहां तक हो जो बात उत्तम धारण करो।

आप इसवर्ष कार्तिकके बाद अपने कालेजके अध्ययनमें काफी मन और समय लगावें, धर्मशिक्षासदनको ४५ मिनट ही समय काफी है जाईंमें तथा जैसा लाला जी कहें सो ध्यान देना।

आ० शु० चि०

इन्दौर मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत ला० सुरवीरसिंह जी हेमचन्द जी जैन योग्य दर्शनविशुद्धि—

परंच—आप सब सकुशल धर्मसाधन करते होंगे। शास्त्रस्वाध्याय पर विशेष ध्यान रखना। श्री प० शरणाराम जी हस्तिनापुर गये थे वे हस्तिनापुर ही हैं या बड़ौत ? हमारा बड़ौत आने का इरादा तो था किन्तु आपको तो मालूम ही होगा बागपतसे हस्तिनापुर चला गया था। यथार्थ शान्तिका कारण यथार्थ ज्ञान है। वस्तुके स्वरूप व कारण में विपर्ययता न रहे तो ज्ञान की समीचीनता है। सर्ववस्तु स्वतन्त्र सत् हैं। किसीका किसीसे सम्बन्ध नहीं। निमित्तनैमित्तक भाव ऊपरी सम्बन्ध है इसकी स्वरूपमें प्रतिष्ठा नहीं। अपनी आत्माको स्वतन्त्र एकाकी अपने परिणमन स्वभाव से परिणमन ने वाला अन्य सर्व अनन्तानंत द्रव्योंसे न्यारा समझकर परपरिणमनमें हर्ष विषाद न करना अपनी अपनी रक्षा है। सब भाईयों को दर्शनविशुद्धि।

मल्हारगंज, इन्दौर आ० शु० चि०

२८ मई सन् ५३ मनोहर वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई लाला सुरवीरसिंह हेमचन्द जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

परंच—आपका पत्र गयामें प्राप्त हुआ था तथा जैन समाजकी ओरसे चातुर्मासका निमन्त्रण भी। वर्षायोगका निर्णय १५-१६ दिनमें कर लूंगा। सब भाइयों को दर्शनविशुद्धि। आत्ममनन शान्

का मान है। बाह्य अर्थ तो जितना भी समागमहो शान्तिका कारण नहीं प्रत्युत अशान्ति का आश्रय है। सामायिक स्वाध्याय नियमित करते रहें।

मल्हारगंज इन्दौर — आ० शु० चिं०
१८-६-५२ — मनोहर वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई सुरथसिंह जी हेमचन्द जी जैन योग्य दर्शनविशुद्धि

पत्र—आप सकुशल धर्मसाधना करते ही होंगे—तदनंतर आपका पत्र आया चातुर्मास के लिये २—३ जगह की विचार लिख दिया है यदि कदाचित् यहांका विचार हमलोगोंका न हुआ तब यहां का चर्तोयोग का सुयोग होगा। इस समय तक १० नगरोंसे जैन समाजके पत्र तार आये हैं उनमेंसे यहाँवालोंको भी विचाराधीन रखा ही है। आप निर्णयमें पहिले आनेका कष्ट न करें। सदस्यजीको दर्शनविशुद्धि। आत्मोत्कर्षका उपाय एकमात्र सम्यग्ज्ञान है उसके सम्पादनके अर्थ स्वाध्याय करते ही रहें। मनुष्य जीवन अमूल्य जीवन है। इसका समय आत्मोत्कर्षमें लगायें। कुछ नये स्थानोंसे अधिक आग्रह होरहा है यदि वहां का मेल विचार न हुआ तो आपको जरूर लिखूंगा। आप निर्णय पहुंचनेसे पहिले आनेका कष्ट न करें।

मल्हारगंज इन्दौर — आ० शु० चिं०
२६-६-५२ — मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई सुरथसिंह जी हेमचन्द जी जैन सराफ योग्य दर्शन विशुद्धि।

पत्र—आपका स्वास्थ्य व धर्मसाधना ठीक होगा।
म सामायिक में सुबहका समय इतना जल्दी उठना सुबह,
३) तो अब जयपुरही होरहा है।

अच्छा है। मन्दिर बडे बड़े करीब १०० हैं। चैत्यालय अलग है।

रत्नकरण्डश्रावकाचार प० सदासुखदास जी की वचनिका सहित का स्वाध्याय करना।

सर्वपदार्थ स्वतन्त्र हैं किसीका किसीके साथ सम्बन्ध नहीं है। क्योंकि सम्बन्ध हो या कोई किसीके परिणतिमें परिणम जायतो फिर वस्तु टिक नहीं सकती किन्तु वस्तुलोक अनादिसे टिकरहा है चलरहा है ऐसी वस्तु व्यवस्था जानकर अपने आपमें अपने आपके सर्वस्वको देखकर प्रसन्न रहो। करना कुछ पड़े अपने स्वभावको न भूलो। मोह राग द्वेषमें हित नहीं। सबआत्मा प्रत्यक्ष से पृथक हैं। भेद विज्ञानकी भावनामें दु:ख ससार अवश्य दूर होगा। परिवारको दर्शनविशुद्धि सत्समहली को दर्शनविशुद्धि।

जयपुर — आ० शु० चि०

४-८-५३ — मनोहर वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत महाशय ला० सुरतवीरसिंह जी हेमचन्द जी योग्यदर्शनविशुद्धि

परंच—आपका पत्र आया आपने जनेऊकी विधि पूछी सो त्याग करना निम्न प्रकारसे व नियम रखना तो कल्याणार्थीका कर्तव्य है। मद्य व्यसनका त्याग रात्रिभोजनका त्याग, जल छानकर या छनाकर पीना शक्त्यनुसार सामायिक देवदर्शन स्वाध्यायमें समय लगाना मुख्य कर्तव्य है।

आपका लिखाहुआ ट्रेक्ट ठीक है। दिवाली बाद ही उसे छपानेका लोगोंका निश्चय है। दिवाली बाद प्राय आपके प्रांतमें आऊ गा। ट्रेक्टकी भाषा बहुत अच्छी है।

धर्मसाधन कायम प्रमाद न करना स्वाध्याय में जो चर्चा न समझमें आवे पत्रद्वारा पूछते रहना।

अपने आपको जानना व उसीमें स्थिर रहनेका प्रयत्न करना ही है सार शेष सब असार है।

अब यहां गर्मी हुई है ठंडा होगया है। अवसर हो तो आसकते हैं अब गर्मीकी बाधा नहीं।

१-अरहन्त देव शरीरसहित लोकमें विराजमान होते हैं। उनके द्रव्य इन्द्रियां पांच हैं। उनसे उपयोग नहीं यानि मनेन्द्रिय-क्षायोपशमिक ज्ञान नहीं। नियमसे वे सिद्धहोंगे सिद्धलोकमें विराजमान होंगे।

२-विकलत्रय दोइन्द्रिय तीनइन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय इसतरह हैं उनके मन नहीं होता।

—मुक्तजीव सिद्ध लोकमें लोकके अग्रभागमें मनुष्यलोक के उपर ४५ लाख योजनमें शरीर रहित हैं इन्द्रियरहित हैं।

४—आत्मा मुक्त होकर फिर संसारी नहीं होता परन्तु परमाणु अकेला रहकर भी फिर स्कंधरूप में आ जाता।

५—गोभी में त्रसधात है। फूलगोभी तो खराब है ही—पत्तेका आप निर्णय कर लेवें। यह भी ठीक नहीं जचती। मूली के पत्ते पर्मीकल् नहीं हैं यह अनन्तकाय भी नहीं है।

जयपुर आ० शु० चिं०
२८—८—४१ मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई सुरवीरसिंह जी हेमचन्द जी योग्य धर्मवृद्धि—

परच—आपका पत्र आया— चातुर्मास्य पश्चात् बड़ौत आने को लिखा सो ठीक है— बड़ौत आनेका अवश्य विचार है इस विषय में असौज बाद लिखूंगा— जिस तिथि का प्रोग्राम बैठेगा।

१—जिस ग्रन्थ में दूध व्रत दही त्याग आदि का वर्णन है उसका मतलब यह है कि जिसके दूध पीने का व्रत है वह दही नहीं खाता और जिसके दही खाने का ही नियम है वह दूध नहीं पीता और जिसके अगोरस का नियम है अर्थात् कोई गोरस खाऊंगा ऐसा नियमवाला दूध दही कुछ भी नहीं लेता।

पर्याय व उदाहरण में लिखा है इस तरह द्रव्य में सब पर्याय आगई परन्तु पर्याय में अन्य पर्याय नहीं आता। इस पर उत्पाद व्यय ध्रौव्य घटाया जाता है।

२—जल एकेन्द्रिय जीव है। गृहस्थ स्थावरहिंसा का त्यागी नहीं हो जाता इसके सचित्तभक्षण का त्याग भी होता है सब अपने अर्थ अचित्त सामग्री करता है। जलको प्रासुक करता है उस जल को साधु ले लेते हैं प्रासुक जलमें कोई जीव नहीं है। जल छाननेके बाद भी एकेन्द्रिय जीव रह जाते हैं यह प्रत्युत है। प्रासुक जलमें एकेन्द्रिय जीव भी नहीं रहते।

३—अपनी जानमाल की रक्षाके लिए गृहस्थ प्रत्याक्रमण करता है उसमें जो हिंसा हो जाता है उसमें जो हिंसा हो जाती है उसे विरोधी हिंसा कहते हैं इसका गृहस्थ त्यागी नहीं हो पाता।

४—जहां अनन्तसिद्ध भगवान विराजमान हैं वहां सूक्ष्म निगोद भी रहते हैं, सिद्ध अपने अनन्त ज्ञानसुख में रत हैं। निगोद जीव अपने दुःख में पड़े हैं सिद्ध भगवान का आत्मा अमूर्त है देह रहित है। सूक्ष्म निगोद में यह लोक ठसाठस भरा है।

५—सिद्ध भगवान के ८ मूलगुण—सम्यक्त्व—सच्चा परिणमन जिसमें सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र व सुखगर्भित हैं। ज्ञान जानना केवल ज्ञान—दर्शन—केवल दर्शन।

वीर्यवान—अनन्त शक्तिमान। शेष ४ प्रतिजीवी गुण हैं फिर लिखूंगा। भैया मैं भी देख लेंगे।

जयपुर, आ॰ शु॰ चिं॰
४—६—५३ मनोहर

श्रीयुत भैया सुमतीरसिंह जी हेमचन्द जी योग्य धर्मवृद्धि।

पत्र—आपका स्वास्थ्य व धर्मसाधन ठीक हो रहा ही होगा। यह शरीर एक सप्ताह से मलेरिया का मित्र हो रहा था परन्तु आज मित्रता भंग हो गई। अपने अनादि अनन्त अहेतुक ज्ञान स्वभाव

ा हृदय रखना यही सर्वोन्नति का मूल है— आपका पत्र आया था—आत की तिथि के बारे में कार्तिक कृष्णपक्ष में लिख सकूँगा। परिवार को धर्मवृद्धि।

जयपुर — आ० शु० चिं०
२१-६-५३ — मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् ला० सुगनचीरसिंह जी हेमचन्द जी मा० योग्यधर्मवृद्धि—

परंच—आपका पत्र आया, हमारा प्रोग्राम ता० ८-११-५३ रविवार को यहां से चलने का हुआ है।

आपका मलरिया अब शान्त होगया होगा। सर्वसमाज को धर्मवृद्धि कहना।

संसार में सब स्थितियां भाग्योदय से होती हैं किन्तु आत्मीय सुख प्राप्ति निज ज्ञान पुरुषार्थ से होती। मानवजीवन की सफलता ज्ञानमात्र अपने आपको पहिचान लेने में है।

जयपुर — आ० शु० चिं०
२७-१०-५३ — मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई सुगनचीरसिंह जी हेमचन्द जी जैन सराफ धर्मवृद्धि—

परंच आपका पत्र आया। आप अपने मनमें अणुमात्र भी भ्रम न रक्खें कि मैं नाराज हूं, हमारा प्रोग्राम उस समय गया जाने का था किंतु कोडरमावालोंने १ हफ्ता और सत्याग्रह करके ठहराया इससे गया नहीं जा सका था। अब धमन्तपञ्चमी को गया जाना निश्चित अभी है। आप सर्व सपरिवार सकुशल धर्मसाधन करते रहें। स्वाध्यायमें अपना विशेष समय लगाना। सप्रसन्न रहना। संसारकी सन्ततिके छेद करनेका लक्ष्य न भूलना। आत्मा का सुख निजमें निजकी दृष्टिमें है। बाह्य परिकर पुण्यका विपाक है आत्मा से उसका अणुमात्र भी कुछ सम्बन्ध नहीं।

वीतराग दृष्टि होने पर जो शेष राग होता है उसके निमित्त से अपूर्व पुण्य स्वयं बधता है। फिर भी उसपर दृष्टि नहीं होता कि यह हितरूप है। आत्मस्वभाव को देखकर लक्ष्यकर अपना जीवन सानन्द बिताइये। विरोध झगड़ा का कोई प्रसङ्ग आव तटस्थ रहना सीखिये। वही काम ठीक है जो आत्मा को शांति दें। हम आपके प्रति हितभावना है। आप स्वप्न में भी यह मत विचारना कि कोई नाराजी है। पत्र तो वैसे ही न डाल सका, कुछ यह भी सोचा कि किस पते से इनको उत्तर के लिये लिखें सो दूसरी जगह पहुँचकर लिख देंगे फिर कुछ देर होगई तो फिर सोचा कि दूसरी जगह से टाल देंगे। किसी जगह चाहे ज्यादह रहना पड़ा किन्तु पहिले से ज्यादह प्रोग्राम कहींका न था। इस बीचम १ पत्र देनेका मुझे ख्याल है कि दिया। शेष सर्व शुभ। आपके पत्र को देखकर मुझे दुःख हुआ कि मेरी जरा सी गफलत म आपको इतना विकल्पका कष्ट उठाना पड़ा। आप निश्चिन्त धर्म साधन करें। हमसब आनन्द हैं। पत्र गयाके पतेमें देना। ८ फरवरीको गया जाने का प्रोग्राम है। परिवार को दर्शनविशुद्धि। बच्चों को आशीर्वाद-

आ० शु० चिं०
६-२-५४ सहजानन्द

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई नेमिचन्द जी—योग दर्शनविशुद्ध।

पत्र—आप सानंद धर्म साधन करते होंगे माता जी को विशेष रूपसे धर्म साधनाका प्रोग्राम रखना कोई शास्त्र सुना दें।

माताजी को दर्शन विशुद्धि कहना और कहना—कि पर द्रव्यको अपना मानना ही दुःखकी जड़ है। सबसम्पन्न होचुके किसीसे ममता न करो। पंच परमेष्ठी के चिंतवनमें शास्त्र सुननेमें उपयोग लगाओ १२ भावनाओं का जुन २ विचार करो। वेदना तो पूर्व कर्मके उदय से होती है। आत्मा का स्वभाव दुःख नहीं है सो यदि वेदना म

क्लेश नहीं करागी तव वह वेन्ना तो कर्मकी निर्जरा करेगी। जो असाता कर्म तुम्हारे वश था वह खिर रहा है अच्छा है इस कर्म से अभी निपट लो अभी समागम अच्छा है, तुम्हारे इस दुखको कोई बांट नहीं सकता इसीसे शिक्षालो कि मत अपने कपायसे कर्म बांधते और उसका फल पाते हैं। जगतका सम्बन्ध तो मिथ्या है, कुछ किसीके पास रहनेका नहीं। केवल पाप पुण्य ही हाथ लगता।

आ० शु० चि० एक मुमुक्षु
(श्री पूज्य १०५ क्षु० मनोहरलाल वर्णी)

卐 卐 卐

श्रीमान् धर्मवीर भाई जिनेश्वर दास जी सान्द इच्छाकार।

भाइ जी हम लोगोंके मनुष्य भव पानेकी सफलता तो इसही में है जो आत्मदया पर विशेष लक्ष्य हो। किसी आत्माका घनिष्ट राग दुःख ही का कारण होता है। अननतिका ही कारण होता है। सम्बन्ध छोड़नके लिये हो। आप तो ज्ञानी हैं मैं समझा नहीं रहा हूँ आपकी बात दोहरा रहा हू। भेद विज्ञानकी भावना जितनी जितनी होती जाये यह तो है अपनी कमाई और शेष कार्योंमें किसी पुण्यकी कृपा मिल या करोड़ों की सपदा मिले य चाहे पर्यायबुद्धिकी मायामय दृष्टिमें प्रतिष्ठा मिले सारा धोखा है।

१-१-५२ आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई जिनेश्वर दास जी योग्य इच्छाकार।

भाईजी ससार धोखा व इन्द्रजाल है। आत्मा तो अनादिअनंत है। आत्मा अनमोल रत्न है। इसमें कीचड़ ममता व रागका लगा है। कर्तव्य तो होना ही है फल जो हो—चिन्ता तो ज्ञानको होनी ही है, ...की व्यग्रता भले ही होजाये। संसारमें

किसीका शरण नहीं। स्त्री पुत्र परिवार मित्र क्या है? क्या कोई किसीको चाह सकता। सुदर्श ही परिणति सुदर्श होना है। अमुक मेरा चाहने वाला है यह भावना भ्रमपूर्ण है। मैं भी आपको चाह नहीं सकता क्योंकि मेरी चाह मेरेसे अभिन्न है। आपकी परिणति आपसे अभिन्न है यह मेरेको कैसे लग सकता। मैं भी रागी। आप भी रागी। अपना अपनी चेष्टायें होना। धन तो प्रगट पर अचेतन है, इसकी ममता भ्रमपूर्ण है ही। अनादिसे इस जीव ने परकी सम्हालकी अपनी ओर दृष्टि नहीं की इतनी मलिनता जीव पर है। यदि अपन पर दृष्टि फेरलो अपने स्वभाव का आनन्द आवे अपना धनकूटी पर रोते रोते कुछ क्षण व्यतीत हो सकता है। मेरा आपसे यह कहना है आप इतनी ऋद्धता रखिये समस्त पर वस्तु से चाह छिदे नाशो भिदे नाशो कहीं जाओ कुछ होओ यह रंच भी मेरा परिग्रह नहीं, मैं ज्ञाता ही हूँ।

आ० शु० चिं०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई ला० जिनेश्वर प्रसाद साहब सहारनपुर।

विपत्ति होयाको कहते हैं—यदि होता कोई वास्तविक चाल हो तो विपत्ति भी कोई चाल होगी सभद्रव्य स्व-स्व के तंत्र रहकर परिणमन करते चले जा रहे हैं। किसी वस्तुके विषयमें स्याह नियागकी कल्पनायें विपत्ति नामकी ज्ञान रख रही है। आत्म स्वन प्रताका रहस्य पा जानेवाले आप लोगोंको कोईभी विपदा नहीं है। जगतम नाना परिणमन वस्तुओंका संयोग वियोग होरहा-होनेदो-इसे कौन रोके—आत्मा का योग उपयोग के अतिरिक्त क्या करे।

संसार मायामय है। आत्मस्वरूप पर लक्ष्य रखिये—दुःख कुछ फिर है नहीं अपना जगत में है क्या।

आपका अकिञ्चित्कर किन्तु हितचिन्तक मनोहर

श्रीयुत भाई जी सादर इच्छाकार।

परच—आपका धर्मसाधन भले प्रकार हो ही रहा होगा—भैया! श्रकुशलता है कहां? आत्मदृष्टि नहीं तो सर्वत्र अकुशलता। एक दृष्टिमें द्वितीयका सम्पर्क ही नहीं, क्या आकुलता होगी। परन्तु हा आत्मदृष्टि। सम्मानका अभाव अखरना, दूसरे अच्छी दृष्टिमें न देखें तो यह भाव अखरना लौकिक वैभवमें पड़ौसीसे अधिक न हो तो वह स्थिति अखरना, मित्र पर आत्मीयों से इष्टवियोग स्नेह होना आदि किस पिशाचिनी की करतूत है? अनात्मदृष्टि की।

रामचन्द्र जी का भी वनमें जीवन गुजर गया, भरत भी असमानके घर भी तो किसी स्थितिमें रहे ही। वास्तवमें क्या परिवर्तन हुए? हम लोगों को क्या किसीने घड़े रहनेका अधिकार जमानेका सबसे हाथ जुड़ानेका, विषय कषायोंसे यत्नाकरभी खुश बने रहनेका पट्टा लिख दिया है। एक कविने ठीक लिखा है 'गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्म माचरेत्'

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् धर्म बन्धु ला० जिनेश्वर प्रसाद जी—सादर इच्छाकार।

परच—आपका पत्र मिला—समाचार ज्ञात किए। संसार का दुःख तब ही तक है जबतक आत्मा ने अपना महान स्वभाव न पिछाना—एवं अपने आत्माके अतिरिक्त कोईभी परमाणुमात्र अपना नहीं इस श्रद्धामें आकुलताको आश्रय का द्वार नहीं मिलता और आकुलता बाहर ही खड़ा रह कर तड़फकर मरजाती है, निज सहजानन्द की होती है। सुख और दुःखका बुला लेना हमारा मिट्टीका और बायें हाथका खेल है। किस ही परिस्थितिमें कोई दुःखरूप विकल्प किया कि दुःखका पहाड़ आगया और किनारा न

परद्रव्य परिणाममात्र रूप अलिप्तनिपत्ति आदि हो अपनेको स्वतन्त्र स्वरूप गनेकाल मात्रमय मरन प्रत्यक चैतन्यस्वरूपको अवलोकनि सुधासमुद्रम अवगाह्य कर अमर होगया। किसी परद्रव्य का मेरे चित्त के अनुकूल परिणाम नहीं होता तब परद्रव्य पर तो अपना वश ही क्या ? अपने चित्तको मारा तो वाञ्छनीय परिणाम म भी कितना ऊ चा परिणाम लगया है। यो ध्यान करने लिखनेमें आनी है यह अवश्य है, सही हो, अपना ही ख्याल है कोरा उपयोग नहीं। अनक आत्मार्थीन आत्मसिद्धि की वे जन्मते ही या पहिलेसे ही कुछ ना पास नहीं थे जो उनका ही ऐसा होना था और हम ऐसा ही रहना है। अपना कर्त्तव्य है आत्मास्वरूप को लक्ष्य मे रखना, अन्तिम शुद्धदशाका आदश रखना, समागममें पडे हैं तब अपना कर्तव्य निभाना और निम समागम म हो उसे तात्त्विक कल्याणकी बात सुनाकर सन्तुष्टकर उस व्यवहार के निमित्तसे अपना अन्त पथ निष्कण्टक बनाना—आपस्वय विज्ञ हैं मैं क्या लिखू।

आ० शु० चि०

मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान भाई ला० जिनेश्वर प्रसाद जी सस्नेह इच्छाकार।

पत्र—आप धर्मसाधन सानन्द हो रहा होगा—भेदविज्ञानका सभ्यास ही सुख शान्तिका मूल है। किसी भी विषयम कितना घन बात पर भी विवेक इसी सामा पर विश्राम पाते हैं।

भैया ! बात सत्य यही है जो सब को स्वतन्त्रता व एकाकिता किस पदार्थके साथ कुछ भी तात्त्विक सम्बन्ध नहीं। जो प्रीति आश्रय हैं वे ही अपने भ्रमसे अपने अहितम निमित्त है, पर भ्रमकाल म ऐसा स्पष्ट बोध नहीं होता है और वस्तुओंमें ममता बनी रहती है। आपका साहस सराहनीय है जो गेही पर गृह म न रचे ज्यों जल तें भिन्न कमल है' इसको चरितार्थ कर रहे हैं।

यहां धान अपने परिवार में भर दीजिये। अब आगे मनान न होना ब्रह्मचर्यपालन आपकी निवृत्ति का परम साधक होगा। वस्तुत तो ज्ञान ही साधक है परन्तु व्यवहार का ग्लमन न रहना भी निमित्त है। मतलब हमारा ज्ञान में है।

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई मित्रसेन नाहरसिंह जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र आप सब सपरिवार सानन्द होंगे, धर्मसाधन पूर्ववत् हो रहा होगा। यहां ऐसा सुना गया जो अग्नि लगनेसे दुकानमें नुकसान होगया। यदि ऐसी बात है तब भी आप कुछ शोक न करें क्योंकि आपके शुभ परिणाममें स्पार्जित पुण्य का ही फल धनवैभव है अत धनवैभव का कारण शुभ परिणाम ही है इसका घात नहीं होना चाहिये और साथ ही वीतराग मसारमाया से रहित सहज स्वरूप शुद्ध आत्मा का आश्रय ही हितकारी मानना चाहिये। आप तो ज्ञानमय हैं आपका कुछ नुकसान नहीं हुआ रहा निमित्त संयोग सो पुण्यका उदय है तब शीघ्र ही पूर्ति हो जायगी अथवा इन विकल्पोंमें भी क्या? अपना धर्माराधन करते हुए आत्मस्वरूप चिन्तवन करते हुए जगतकी मायाका दृश्य निरपेक्ष बुद्धिसे देखते हुए मानवजन्म सार्थक करें। यद्यपि आपको कुछ भी चिन्ता न होगी और इसीलिये मेरे इस लिखनेके आशय को विचार कुछ हँसेंगे भी लेकिन अच्छा है— मैं तो यही चाहता हूं जो आप निराकुल रहें। सीमधर जी मूलचन्द जी आदि को दर्शनविशुद्धि।

४—८—५०

आपका हित चि तक
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भव्य चि० जैन समाज योग्य इच्छामि एव दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आप सबका अनेक हर्षातिरेकपूरित पत्र आया। यहां मेरठ जी का व समाज का बहुत अनुरोध हो रहा है। मुझको यहां आना कठिन मालूम होता है इसलिये अब मैं क्या लिखूं ? हटरादूनवालों को भी मजबूरमय उत्तर देना पड़ा है। जैन समाज मेरठ का भी जरासी बात पड़ा हुआ है।

भाई जी वस्तुतः प्रत्येक निमित्त की उपस्थिति में भी सारा प्रयत्न मुमुक्षु अन्तरंगम ही होता है। आप सब अपने ही उत्थान के बलमें शाश्वत सुख का मार्ग पालेंगे। आपकी जो मेरी मुलाकात होगी तब तक निर्विकल्प दशा न हो तब तक प्रयत्नशील हुआ—रही संयोग की बात वह मेरे ही आधीन नहीं सो आप हम ही रहे हैं। इच्छा तो मेरे आधीन है पर उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति पर्यायके आधीन है—आप सब आइये का धर्मवात्सल्य बहुत ही सराहनीय है, आशा है जो आपका होता रहा प्रेम इस शरीर को मुजफ्फरनगर के क्षेत्र का रखने में निमित्त होगा।

भाई जी ! सुख शान्ति से आप सबालय पूर्ण हो स्वभाव की दृष्टें। अनित्य और पराधीन बाह्य पर्यायों की आशा में यह भगवान रुका हुआ है। एक मोह गला कि सब विपदा दूर हुई क्योंकि विपदा सब स्वप्न ही हैं और इसी तरह संसारसुख जोकि विपदा ही है स्वप्न ही है—अपनी चेतो नया कदम उठाओ आप आत्मा इतने ही नहीं जितने समय मनुष्य रहता है। अनादि निधन हैं। योग्य कार्य लिखना।

इन्दौर आ० शु० चि०

२४—६—४२ मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई सुगमचन्द्रदास दास जी रमेशचन्द्र जी—

योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आपका पत्र आया—मेरा स्वास्थ्य अच्छा है, बालकोंद

को भी पूरा आराम है। शास्त्रस्वाध्याय का ध्यान भोजन के समान ही होना बल्कि भोजन से भी अधिक होना योग्य है।

आपकी स्वाध्याय की रुचि प्रशंसनीय है—परमात्मप्रकाश का आप स्वाध्याय कर रहे हैं उसमें टीका में लक्ष्य वाक्य हैं तथा हर बात तुरन्त ही मुकाबले के साथ दर्शाई गई जैसे सिद्ध सुख कहा तो वहीं संसार दुःख बताकर संसार दुःख से विपरीत, सब दोनों मुकाबला पर तुलना करते हुए पढ़ना चाहिये।

असैनी पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्तमें जो गुणस्थान एक बतलाये उसका मतलब यह भाव है कि कोई सैनी पञ्चेन्द्रियके मरनेके समयमें सम्यक्त्व छूट जाय और दूसरा गुणस्थान प्रारम्भ ही हो और उसका मरण होकर यह जीव असैनी पञ्चेन्द्रियमें जन्मले तो असैनी पञ्चेन्द्रियके अपर्याप्त अवस्थामें कुछ समय तक दूसरा गुणस्थान रहता। इसी तरह एकेन्द्रिय द्वीन्द्रिय चतुरिन्द्रियके अपर्याप्त अवस्था में भी दूसरा गुणस्थान सम्भव है। परन्तु ऐसा यह सैनी पञ्चेन्द्रिय जीव जो दूसरा गुणस्थान लगतेही मरण करता वह तेजकायिक और वायुकायिक नहीं होता इसलिये तेजकायिक व वायुकायिकके अपर्याप्त अवस्था में दूसरे गुणस्थान सम्भव नहीं होता।

दूसरा गुणस्थान चौथे से गिर कर ही होता है। इन्द्रभवन, तुकोगंज।

इन्दौर

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् जुगमन्दरदास जी—

संसार आपत्तियों का स्थान है, निराकुलता की यदि कोई स्थिति है तो यह ही है जो सच्चे ज्ञान का उपयोग करके रागद्वेष मोह से रहित आत्मा को बनाया जाय—किसी भी वस्तु को अपनी ... ही न माना तबसा अपनी नहीं। अपनी

तबभी पुण्यके उदय तब साथ हैं अपनी न मानो तब पुण्यके उदयम साथ ही है। सच्चा ज्ञान सुख का मूल है अपनी आत्मा की सत्ता आत्मा से नहीं बिछुड़ती आत्मा को निर्मल रखने का प्रयत्न ज्ञान का फल है – आपकी प्रकृति मोक्षमार्ग के अनुकूल है एक स्वाध्याय पर विशेष लक्ष्य रखियेगा।

आ० शु० चि०
मनोहर –

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई ला० जुगमन्दरदास रमेशचन्द जी–योग्य दर्शनविशुद्धि–

जगतमे प्राचीन अनन्तबार वैभव और राज्य पाया पर आत्मज्ञान जो खुद ही में है आज न दरसा, आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिये कुछ खर्च भी नहीं और न परिश्रम ही करना होता केवल वास्तविकता जानने का उत्साह होना चाहिये। सुख निवृत्ति में है, सबमें बसना हुआ भी यदि अपने आपको आत्मस्वरूप के कारण अकेला ही समझें तो उसकी आकुलतायें सब समाप्त हो जावें। रत्नकरण्ड श्रावकाचार उत्तम ग्रन्थ है उसकी आप स्वाध्याय कर रहे हैं अच्छा है—उसमें जो बात समझमें न आवे उसे आप किसी ज्ञानी से पूछ लिया करें, उपेक्षा न करें, या पत्र द्वारा पूछ लिया करें।

कांधला

आ० शु० चि०
मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई ला० जुगमन्दरदास जी—योग्य दर्शनविशुद्धि–

धर्मसाधन प्रतिसमय की चीज है केवल मन्दिरकी ही नहीं। वह किस प्रकार कि हर जगह हर स्थिति में आत्मा का और जगत का सत्यस्वरूप लक्ष्य में रखकर अपनी ओर झुकना और कषायों से दूर रहने की साहसिकता होना भी धर्म का पालन है। दूकान पर बैठकर भी यह भाव निरन्तर रहे कि "मैं तो ज्ञानमात्र हूँ, सहज

धारण करने का सामर्थ्य प्रगट न हो तो तक गृहस्थ धर्म में रहकर अनेक परिग्रहविशोध धर्मेका सम्य नियम रखते हुये मुख्य आत्माका ध्यान मनमें न कौन पदार्थ है, व्यापार का सम्बन्ध तो गृहस्थधर्म को निर्वाह पालने के लिये है" इस तरह दूकान करता हुआ मुनीम की तरह भाव रखते तो व्यापार कमाता हुआ भी रुपया पैसा उपार्जित करता हुआ भी कर्मों की यथाशक्ति निर्जरा कर सकता है।

सुख मनोरथ में है सुख शान्तिमय जीवनयापन में है सुख सच्चे ज्ञान में है। सच्चे ज्ञान के उपार्जन के लिये अपनी सम्पत्ति का सदुपयोग करना यह सदुपयोग है। आत्म कीर्तन में जो भाव हैं उसका विशेष चिन्तवन करना।

आ० शु० चि०
मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई लाल जुगमन्दर, तथा रमेशचन्द्र ना योग्य दर्शनविशुद्धि

पत्र—आपका पत्र आया—आप लगनपूर्वक स्वाध्याय करते यही कल्याण का मूल होगा— भाई रमेशचन्द्र जी अपने स्वाध्याय का नियमित एक घंटा रखना—शेष समय अन्य अध्ययनमें व्यतीत करना—मनको शुभोपयोग में ज्ञानार्जन में लगाना ठीक है— प्रश्नों का उत्तर निम्न प्रकार है—

(१) पहले गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान तकके जीव छद्मस्थ कहलाते हैं— जिन्हें केवल ज्ञान प्रगट नहीं हुआ वे सब छद्मस्थ हैं।

(२) केवली तो अरहन्त और सिद्ध आत्मा है, श्रुतकेवली उन साधुओं को कहते हैं जिन्हें अगप्रविष्ट और अगबाह्य रूप समस्त श्रुत का ज्ञान हो गया हो अर्थात् जो ११ अग १४ पूर्व सामायिक आदि अगबाह्य के ज्ञानी हैं केवली

द्रव्यकर्म तो ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अन्तराय इन आठ कर्मों को कहते हैं, ये पुद्गल द्रव्य हैं। जिन वर्गणाओं का कर्मरूप परिणमन होता है वे कार्माण वर्गणायें हैं। रागद्वेष मिथ्यात्व आदि विभाव जो कर्म के उदय से आत्मा में प्रकट होते हैं वे भावकर्म कहलाते हैं। नोकर्म शरीर को कहते हैं। जिस जीव ने जिस शरीर में वास किया हो वह शरीर उस जीव का नोकर्म है।

शीलमहल, इन्दौर — आ० शु० चि०
११-८-५२ — मनोहर वर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई ला० जुगमन्दरदास जी दर्शन विशुद्धि—

पत्र—आपका धर्म साधन सानन्द होता होगा — आपके पत्र द्वारा वृत्त अवगत किये मनुष्य जन्म की सफलता आत्मध्यान से है। आत्मा की यात्रा मनुष्यभव जितनी ही नहीं। आत्मा तो अनादि से है और अनन्तकाल तक रहेगा, जिस वैभव भी अपनी सत्ता से है परन्तु है सब स्वतन्त्र, आत्मा का साथी आत्मा का भाव है, अतः आत्मज्ञान की दृढ़ता के लिये स्वाध्याय को भोजन की तरह क्या भोजन से भी अधिक आवश्यक समझिये।

शिमला — आ० शु० चि०
१३—५—५२ — मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई जुगमन्दरदास जी योग्य दर्शन विशुद्धि।

पत्र—आपका पत्र आया समाचार जाने—आपका धर्मसाधन भले प्रकार होता ही होगा। भैया! मनुष्यभव जाने का फल यह है जो शान्ति का सच्चा मार्ग पा जाना बाह्य वैभव पुण्य का फल है इस वैभव से आत्मा को सत्य शान्ति नहीं मिलती इसलिये इतना उदार अपना चित्त बनालें वैभव आवे या न आवे उसकी कोई अपेक्षा

नहीं भाग्य के अनुकूल तो आना ही, चित्तका खर्च नश्वर वैभवके लिये क्यों किया जावे। शान्ति गुरु ही के पास है सुदृही में मिलती है, लाक व्यवहार जितना कम होगा उतनी ही शान्ति होगी।

आ० शु० चिं०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान ला० जुगमन्दरदास जी रमेश जी योग्य दर्शनविशुद्धि।

पत्र—आपका पत्र आया—क्रियावान द्रव्य २ हैं एक जीव दूसरा पुद्गल+इन दोनोंके मेलका ठाठ यह है सारा जगत है जो माया स्वरूप है—आत्माका वैभव आत्मज्ञान है, किसी भी परिस्थिति में हर्ष विषाद न करना ही बुद्धिमत्ता है। अलौकिक और अमूल्य जो वैभव है वह आत्माका आत्माके पास है उसे न कोई छीनना न हर सकना है। जो छीनी जा सकती हो वह आत्मा की विभूति नहीं। जीवने अनेक जन्म धारणकिये पर उत्तम कुल धर्म यहां प्राप्त हो ऐसा मनुष्य जन्म न पाया था—अब जो हम सब आपने पाया उसकी सफलता मिथ्यात्व हटाने में है धार्मिक परिणाम आत्माके साथी हैं। राग द्वेष तथा जिस पर्यायमें पहुँचे उसीमें आत्मीयताका भाव यह ही संसार व दुःख है—अपने एकाकी आत्मारामके स्वरूप पर दृष्टि हो, शान्ति उसीमें है।

— आ० शु० चिं०
मनोहर

卐 卐 卐

श्री भाई ला० जुगमन्दर दास जी रमेशचन्द्र जी योग्य दर्शनविशुद्धि

पत्र—आप सबका धर्मसाधना ठीक चलरहा होगा स्वाध्याय ज्ञानका मुख्य साधन है। स्वाध्याय ही आजकल गुरु है, सच्चा मार्ग मिल है। आप हम सब आत्मज्ञान सुखके ... ही असार चीजोंके लोभसे यह

रहा है। अपने आत्माके ज्ञानके बराबर कोई वैभव नहीं—अत स्वाध्यायको भोजनसे भी महत्वशाली समझें।

अपना आत्मा अनादि निधन ज्ञान सुखपूर्ण है—ज्ञाता दृष्टा रागद्वेषसे भिन्न है इसके अनुभवका प्रयत्न जरूर करना। आत्मानुभव सार है। शेष सब क्षणिक व्यापार हैं।

इन्द्रभवन, तुकोगंज — ब्र० शु० चि०

इन्दौर — मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान भाई ला० जुगमन्दरदास जी रमेशचन्द्रजी योग्य दर्शनविशुद्धि

परचा—आपका पत्र प्राप्त हुआ—आध्यात्मिकासम मनेरा करने के लिये निम्नलिखित चर्चाओंको समझलेना जरूरी है—

(१) उपादान-निमित्त। (२) जीव किसका कर्ता और किसका भोक्ता है। (३) आत्माका सहज स्वभाव व औपाधिक परिणाम।

१—उपादान वह ही वस्तु होती है जिसमें कार्य कहो या पर्याय कहो याने अवस्था प्रगट होती। निमित्त बाकी सभी पदार्थ हैं जो अवस्था होनेके समय मौजूद हो और जिनकेबिना अवस्था नहीं होती जैसे जीवमें रागद्वेष मोहादिके विकार होते हैं वहां उपादान तो कलुषित भाववाला जीव ही है और निमित्त कर्मका उदय तथा शरीर, मकान, पुत्र स्त्री, कुटुम्ब-आदि हैं।

२—जीव अपने परिणामका ही कर्ता है और परिणामका ही भोक्ता है, अन्यवस्तु अन्यवस्तुकी अवस्थाका कर्ता भोक्ता नहीं होता

३—आत्माका सहज स्वभाव है सबगुणोंका शुद्ध परिणमन, जैसे शुद्ध ज्ञान, रत्नत्रय परिणमन वीतरागता आदि। आत्माका वैभाविक भाव है जो कर्मोंके उदय निमित्तसे होता है जैसे राग द्वेष आदि विभाव परिणमन सर्वथा नष्ट किया जा सकता है क्योंकि वह निमित्ताधीन है स्वाधीन नहीं है।

हस्तिनापुर आ० शु० चि०
मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० जुगमन्दरदास जी रमेशचन्द्रजी योग्य दर्शनविशुद्धि।

परंच—आपका पत्र आया एक निज आत्माके सिवाय अन्य सबपदार्थ और आत्माकी शुद्ध अवस्थाके सिवाय सब अवस्थायें कुछभी आत्माके हितके अर्थ नहीं। लोकमें बडे न बने तो इतना ही होगाकि लोक न जानेगा परन्तु बडे बननेके अर्थ जो सकल्प विकल्प का संस्कार बनाया जाता तो इसका फल लोक नहीं भोगता लोकके जानने न जाननेमें आत्माका लाभहानि नहीं, यह बात धनी निर्धन पढित त्यागी सबके करनेकी है। आजकल प्रायः लोग धना बनना चाहते हैं, बड़े कहलानेके लिये, ऊची सर्विस चाहते हैं, बड कहलानेके लिय, किन्तु लाभ जिस बात म है उसपर दृष्टि नहीं देते। लाभकी चीज है आत्मज्ञान। जो मनुष्य आत्मज्ञानी बनकर साफ रहन सहन ओनखपान नियत व्यापार धार्मिक कर्तव्य करता हुआ अपना समय व्यतीत करे उससे बड़ा हम और किसी गृहस्थ को नहीं समझते।

स्वाध्यायमें १ घटा नियमपूर्वक समय लगावो।

भाई रमेशचन्द जी! आप अपना धर्म अध्ययन ठीक कररहे हैं। जब तक छुट्टिया हैं कम से कम २ बारमें १-१ घटा समय बचाकर स्वाध्यायमें दवें। शकाओंके समाधान इस प्रकार हैं।

१—मिश्रगुणस्थानमें—जो ज्ञान होतेहैं उन्हें न तो पूरी तौरसे सम्यग्ज्ञान कहते और न पूरी तौरसे मिथ्याज्ञान कहते फिर भी सम्यक्त्वकी ओर दृष्टि मुख्यसी है इसलिय तीसरे गुणस्थानमें कहीं अवधिज्ञान कहते हैं। कहीं नहीं भी कहते हैं। जब अवधिज्ञान की विवक्षा हो तब अवधि दर्शन भी होता है। परन्तु यह वर्णन विशेष अच्छा है जो मिश्रगुणस्थान में अवधिदर्शन न कहा जावे

क्योंकि उस गुणस्थानमें न तो मिथ्याज्ञान ही रहते न सम्यग्ज्ञान ही रहते हैं अत: ३ मिश्रज्ञान माने गये हैं।

२—चक्षुदर्शनमें—जीव समास इस प्रकार ३ हैं—

(१) चतुरिन्द्रिय, (२) असैनी पञ्चेन्द्रिय, (३) सैनीपञ्चेन्द्रिय

धर्माध्ययनमें रुचिपूर्वक समय दीजे।

दरिमला

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई लक्ष्मीचन्द जी जैन योग्य दर्शनविशुद्धि।

परच—आपका पत्र आया समाचार जाने—आपका स्वास्थ्य अब अच्छा होगा-समाचार देना—संसारका जो भी अर्थ दिखाता है वह सब विनाशीक पर्याय है आत्माके हितरूप कुछ भी नहीं, इस आत्माने अनादिसे सबकुछ पाया परन्तु अपने आपकी ठीक पहिचान अब तक न पाई, भैया। समस्त संसारके पुद्गलोंका भी ढेर प्राप्त होजाय तब भी उस सुखकी बराबरी नहीं कर सकता जो यथार्थज्ञान द्वारा समस्त उपयोग हटाकर अपनी सममर्म सुख प्राप्त होता।

संसारके प्रायः सभी प्राणी सभी मनुष्य बड़ी तबीसे जड़ पदार्थके संग्रह रक्षा आदिके लिये दौड़ धूप मचा रहे हैं पर हम आपको उनकी नकल करनेकी जरूरत नहीं, वे भी मरेंगे हमभी मरेंगे याने शरीर छोड़कर चलेजायेंगे फिर मिला क्या, आत्माकी पवित्रताके समान और कुछ धन नहीं कोई सुख नहीं, अतः जगत् के ठाठको धोखा समझकर इनमें रुचि न करना तथा अपने विषय व क्रोध, मान, माया, लोभको भी अपना न मानना क्योंकि ये सदा नहीं रहते, आत्माका स्वभाव नहीं। तो भी जबतक आत्मामें रहते हैं पागल बना देता है तथा व्याकुल कर देता है इसलिये विषय कषाय का त्याग करना व संयम धारण ही परम कर्तव्य है।

आपने जो मेरे स्वास्थ्य के ठीक कर लेने के विषय में सम्मति दी उसे मैं मानूंगा ऐसा मेरा विचार है। अब तक भी तो आपकी कोई बात नहीं टाली अथवा मैंने रागवश आपकी बात के निमित्त अपनी चेष्टा आपके भावके अनुकूल की क्योंकि किसी की बात कोई न मान सकना न टाल सकना यह सब मोहका व्यवहार है। खैर व्यवहार ही सही परन्तु हमारे व आप लोगों के जो परस्पर व्यवहार हैं वे उन्नति में कुछ न कुछ सहायक निमित्त हैं, हानि कुछ नहीं, धर्मवात्सल्य ही इसका कारण है।

सर्वमण्डली को दर्शनविशुद्धि कहिये।

कैराना — आ० शु० चिं०

१५—६—५० — मनोहर

卐 卐 卐

श्री भाई ला० निर्मलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

परंच—आपका पत्र मिला—संसार का स्वरूप ऐसा ही है जो किसी भी परद्रव्य के सम्बन्ध में ऐसा सोचा जाय कि अमुक कार्य को पूरा करके धर्मध्यान करूं तो निवृत्ति नहीं होती। मनुष्य जन्म बड़ा दुर्लभ है। बुद्धि के विकास का अवसर मनुष्यजन्म में ही प्राप्त होता है—अब मैं और कुछ विशेष नहीं कहता जो आत्म कीर्तन में लिखा है उसी पर ही विचार कर लेना—आपके स्वास्थ्य का अस्वस्थ होने का समाचार जाना सो योग्य उपचार करना एवं शरीरसे भिन्न आत्मा की अनुभूति रूप औषधि भी करना—घर में स्वास्थ्य ठीक होगा। हमारा चातुर्मास इन्दौर ही होगा। आत्मज्ञान आत्मस्थिरता से संसारके सब संकटों की होली हो जाती है—अपनी पहिचान बिना आत्मा अनाथ है—धन परिवार कुछ भी हमें सहाय नहीं है—संसार असार व अनित्य है— अतः भैया पर्याय बुद्धि हटाकर निजबुद्धिमें भी कुछ समय बितावें— मनुष्यभव बार बार नहीं मिलता

दि० जैन मन्दिर नशिया
मल्हारगंज, इन्दौर
१२-३-५२

आ० शु० चि०
मनोहर वर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान भाई ला० विमलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आपका स्वाध्याय ठीक हो रहा होगा— तदनन्तर मेरा स्वास्थ्य ठीक है— आपका व आपकी धर्मपत्नी का स्वास्थ्य ठीक होगा, स्वाध्याय सामायिक प्रतिदिन होना ही होगा, आत्मा संसार में अकेला ही है क्योंकि कोई पदार्थ किसी पदार्थ में तन्मय होकर परिणमन कर ही नहीं सकता ऐसा वस्तु स्वभाव है। तब वस्तु स्वभाव को मानकर उसके अनुकूल अपने को बनाकर अर्थात् आत्मा को ज्ञाता दृष्टा बनाकर अपूर्व शान्ति का अनुभव करना लोकोत्तम कार्य है। आत्मदृष्टि में ही पूर्ण संतोष आना, कृतकृत्यता आजाती, बाह्य तृष्णा में न संतोष का अवसर है न कार्य ही पूर्ण होते। लोग तो कर्मबद्ध होने से प्रकृत्या भौतिक पदार्थ के संग्रह की ओर झुके हैं। लोगकी प्रवृत्ति में अपने सत्पथ का निर्णय नहीं होता। केवल आत्मदृष्टि से अपने पथका अनुसरण होता। यह आत्मदृष्टि भेद विज्ञान से प्राप्त होती। भेदविज्ञान स्वाध्याय और भावनासे प्राप्त हो सकता अतः स्वाध्याय सामायिक को बढ़ाना अच्छी बात होगी। विशेष क्या लिखू आप स्वयं प्रतिभासम्पन्न हैं। सर्व मण्डली को दर्शनविशुद्धि कहिये।

कांधला

आ० शु० चि०
मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान भाई विमलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आपका पत्र आया। श्री ब्र० सुमेरचन्द जी भगत अभी तक तो यहां नहीं आये। सम्भव है देहली या अन्यत्र गये।

ससार म शरणभूत यदि कुछ है ता निर्मोहता'— किसी का कहीं कुछ भी नहीं है, मत आत्मा अपने अपने म परिणमन करते गा रहे हैं, इस यथार्थता का पता न लगना सबसे बड़ी विपत्ति है इस यथार्थता का अनुभव म उतर जाना सबसे बड़ी सपत्ति है। बाह्यपदार्थ ता छूटने को ही है, किसी तरह छूटो।

श्री ला० किशोरीलाल जी यहा आय थे। उनसे मालूम हुआ कि आपकी गृहिणी कुछ बीमार हैं, उनसे दर्शनविशुद्धि कहना और कहना कि बाह्य इलाज तो बाह्य है ही, सबमें बड़ी चिकित्सा है समता। दोनों समय पञ्चपरमेष्ठीका ध्यान करो, सामायिक करो अपना स्वभाव विचारो। जो उदय म आता उसे सहना ही है शांति से सहो तो घरके लोग भी व्याकुल न होंगे और आपके निर्जरा होगी।

आपके पिताजी को दर्शनविशुद्धि आप मत्सम्पन्न हैं अथवा आपका यहा है भी क्या। आपका क्या किसी का भी है क्या? अन्तरग म ममता न रक्खो, कर्तव्य करना और बात है तथा गृद्धता और बात है। प्रतिदिन सामयिक स्वाध्याय करिये। श्री १०५ क्षु० चिदानन्द जी को ता इच्छाकार कहना। समाचार देना।

द्वारा आ० शु० चिं०
मनोहर

卐 卐 卐

श्री भाई विमलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आपका पत्र आया समाचार जाने। आप अपने घर पर भी प्रात शीघ्र उठकर १ घटा स्वाध्याय करने का अभ्यास कीजिये। यदि उचित समझें ... के मन्दिरों मे जहा स्वाध्याय को ग्रन्थ नहीं हैं २। ... माला के सेट भिजवादें या जो साहब समझें

सबसे दुर्लभ वस्तु है रागद्वेष न करके अपनी प्रकृति का स्वाद लेना, शरीर अनन्त पाये, वैभव अनन्तवार पाये, परिवार अनन्त पाये, कुछभी आत्माको शरण नहीं हुआ बल्कि आत्माको दुखी बनाने व्याकुलित बनाने में सब सहकारी हुआ। मूर्छा आत्मा का घात करने वाली वस्तु है। जैन लोग कहते हैं कि अंग्रेजों ने हंसा हंसा के लूटा, चारित्र गिराया, यह सब तो कल्पना ही है। वास्तव में मूर्छा ने हम सबको बरबाद किया। अकेलेपन में अनन्त आनन्द है इसकी रुचि नहीं रखना चाहता मोही प्राणी, परके लिये मरा जाता है परन्तु पर अपना कुछ होता नहीं। मैं भी यह पत्र लिख रहा हूँ इसकाभी कारण स्नेह है परन्तु मोहियाका जैसा परिवार में है वैसा नहीं। आपका पत्र आया, आपको धार्मिक जानकर स्नेह हुआ, परन्तु इतनी आकुलता नहीं जो आप मेरी बात मानें ही मानें। हां भावना जरूर ऐसी है जो कभी १ मिनट भी क्या १ सेकिण्ड भी रागद्वेष न करके आत्मप्रकृति का स्वाद ले लें। जो बात मुझे रुच गई वह आपको भी हो जाय स्नेहमें ऐसी ही कल्पना होती है। इस बात को पाने के लिये पहिले सामायिक आदि में जिस जिस पर राग हो उसकी असारता विचारें, फिर अपने राग परिणाम की असारता विचार, फिर कुछ सोचना बन्दकर आराम से रह जाय। ऐसे अभ्यास में आप कोई ऐसा स्वाद पावेंगे जो शान्ति सुखका सच्चा उपाय है। यह पैराग्राफ सबको सुना देना जो स्वाध्यायमें आते हों। शेष सब कुशलता है।

इटावा

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्री भाई विमलप्रसाद जी—योग्य दर्शनविशुद्धि—

परञ्च—आपका धर्मध्यान सकुशल हो रहा होगा— अनादि निधन स्वकीय आत्मा के संसार दुःख से डरने के

चिन्तवन कभी कभी होता होगा— संसार तो मेला है। स्वयंके हितका विचार व प्रयोग होने म कुशलता है—मेरा स्वास्थ्य ठीक है आपका स्वास्थ्य ठीक होगा। आत्महित तो हर अवस्थामें किया जा सकता, परवस्तुका परिणमन बाधक नहीं हो सकता। हम ही स्वय अपनी कल्पनायें करते रहते हैं तब बताइये परबाधक रहा या निजकी कल्पनायें। संसार में आत्मा अनन्त हैं, सब समान हैं, अपने से सब जुदे हैं, परिवार में जिनका समागम होता वे भी उतने ही जुदे हैं जितने कि मनिंदुग दूसरे लोग। जिन्हें अपना माना जाता वह तो भ्रमदशा है। आत्मा के महान् भवितव्य का उदय यह है जो आत्मज्योति की पहिचान होकर उसी म स्थिरता हो। आप जिनकी सत्पुरुष हैं क्या लिखें, हम लिखना भी क्या था, पर पत्र जो था सब क्या लिखें, खाली भेजना भी तो आपयने न चाहा। आपका सत्य कल्याण हो यही मेरी भावना है।

२ अगस्त सन् १९५१ — आ० शु० चिं० मनोहर

卐 卐 卐

श्री भाई निर्मलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आप प्रसन्न होंगे। आपका समाचार पत्र नहीं आया सो देना। अपनी गृहिणी के स्वास्थ्य से आप निराकुल होंगे, समाचार देना।

आत्मा अकेला है। आप भी अकेले ही हैं। सारा सम्बन्ध मायारूप है—तत्त्वतः कोई किसी का नहीं। हम भी केवल रागकी चेष्टाकर आपको पूर्तिका आश्रय बना रहे हैं। तब अकेले आप आत्मा की खबर रखना। कोई साथी नहीं होगा। आपकी उपार्जित की हुई निर्मलता काम आवेगी।

३१ जनवरी सन् १९५१ — आ० शु० चिं० मनोहरवर्णी

श्रीयुत ला० चेतनलाल जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

परच—आप सकुशल धर्मसाधन कर रहे होंगे। मनोहर को करीब २० दिन से चौथिया या तिजारी ज्वर था। अब शांत सा मालूम होता है। इसकी बारी चतुर्दशीको थी। उस दिन उपवास था। उस दिन बाधा नहीं थी। शायद अब न आवे।

शास्त्र सभा आपकी होती ही होगी। जिस किसी भी प्रकार यदि एक यहही दृष्टि बन जाये कि मैं आत्मा स्वतन्त्र अविनाशी अपनेसे अपनेमें परिणमने वाला हूँ, कोई भी आत्मा मेरा न विरोधक है और न विरोधक हो सकता है इस विचारसे किसी आत्माके प्रति वैर विरोधका भाव न उठे तो बहुत कुछ पा लिया।

जगत निनश्वर है। कोइ किसीका साथी नहीं। विचित्र यात्रा है। यात्रामें भ्रम करने वाले इतस्ततः यात्रा ही करते रहते। भ्रम न करने वाले अपने धाम पहुँचकर विश्राम पालेते हैं। आप सबका कल्याण हो।

श्री ला० विमलप्रसाद जीको दर्शनविशुद्धि। स्वाध्याय सभामें आते होंगे या प्राइवेट ही शास्त्र पढ़ते होंगे।

मेरठ शहर — आ० शु० चिं०
१२—१—५२ — मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान भाई ला० चेतनलाल जी, ला० किशोरीलालजी, ला० विमलप्रसाद जी, ला० जिनेश्वरदासजी, ला० लच्छीराम जी, बा० समन्दरलाल जी, बा० वासुदेवप्रसादजी आदि सब बंधुगण योग्य दर्शनविशुद्धि—

परच—आप सर्व सकुशल धर्मसाधन करते होंगे। धर्म मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभको दूर कर देना है क्योंकि इसीमें शान्ति है। इस योग्य अपने विचार बनानेका प्रयत्न करना व्यवहार धर्म है।

जीवन क्षणिक है। फिर क्या हो ? कैसे तत्व जाननेका उपाय मिले ! अभी तो सर्व योग्यता है। सम्यग्दर्शन भावको दृढ रखनेका उद्यम करना। यदि विशेष झंझटमें नहीं पडना तो सम्यग्दर्शनके आठ अंग कहे हैं उनको अमलमें लाने का प्रयत्न करना। वे अङ्ग कौन कौन हैं उनका क्या स्वरूप है ? आप अपने स्वाध्यायमें चर्चा कर लीजिये और आठों पर क्या अमल किया रोज का हिसाब रखिये। भाई मूलचन्दजीको दर्शनविशुद्धि—
आर अर्थप्रकाशिका को जरूर अवलोकन करें।

आ० हितचिन्तक
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान भाई ला० चेतनलाल जी, ला० किशोरीलाल जी, ला० विमलप्रसाद जी, ला० समन्दरलाल जी, भैया मूलचन्द जी आदि योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आप सर्व सानन्द धर्म साधन करते ही होंगे। मैं आज सुबह सन्दर मेरठ आ गया हू। मेरे इस समय सिर दर्द है। विशेष कुछ नहीं लिखता। मेरा तो यह कहना है जो इस छंद पर अमल हो।

"पुण्यपाप फलमाहि हरष विलखो मत भाई।
यह पुद्गल पर्याय उपजि विनसै फिर थाई॥
लाख बात की बात यही निश्चय उर लावो।
तोड़ सकल जग दंद फंद निज आतम ध्यावो॥"

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत ज्ञानगोष्ठीके सम्यगण श्री ला० चेतनलाल जी आदि योग्य दर्शनविशुद्धि—

परच—आपका पत्र आया। जगतमें जितने द्रव्य हैं वे सब स्वतन्त्र हैं, स्वय सत्तावाले हैं, परस्पर भिन्न हैं, अकेले ही परिणमन वाले हैं, स्वय का स्वयं ही है, किसी का कोई नहीं क्योंकि द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव सबका पृथक है इस श्रद्धामें शान्ति मार्गका प्रारम्भ है अन्यथा काल तो अनंत व्यतीत हुआ ही है आगे व्यतीत होनेमें क्या बाधा है ?

इस प्राणीने परद्रव्यके निमित्तसे होनेवाले भावका परिचय और अनुभव तो बार बार किया परन्तु ज्ञानमात्र आत्मतत्त्वका परिचय एक बार भी नहीं करता यदि भेद विज्ञान की छैनी से आत्माके स्वभाव और पुद्गलके निमित्तसे होने वाले विभावके बुद्धिमें टुकड़े करके चेतन स्वभावको बुद्धिमें उपादेय बनाने और विभाव को बुद्धिमें ही हेय कर डाले तो ससार सन्तानका नाश हो जाये और दुःखोंका अन्त हो जाये।

आत्माका जो स्वभाव है उसही रूप रहनेमें आपत्तियोंका अभाव है। उसके विरुद्ध चलने वाले साक्षी न रहकर रागीद्वेषी बननेमें आपत्तियोंका प्रसार है।

वैभव तो अचेतन है। वह तो आत्माकी जातिका भी पदार्थ नहीं। वह तो आत्माका होगा क्या ? परन्तु अन्य चेतन आत्मा भी अपनी सत्ता से पृथक हैं। आत्माका आत्मामें नाता नहीं, तथापि आपकी महलीमें जो किसी धर्मात्माका धर्मात्मामें वात्सल्य हो तो धार्मिकताका ही रूप रहेगा। अत आप सब परिवारजनोंमें मित्रोंमें यही बुद्धि रखें जो परिवारका समागम सत्य मित्रोंका समागम इस ही लिये है जो परस्पर धर्मके बढ़ानेमें सहकारी ही रहें और ऐसी ही शिक्षा, ऐसा ही व्यवहार हो जिससे धार्मिकता का उदय रहे।

चौबीसो घंटे की चर्यामें भी ऐसी चर्या हो जो प्रत्येक बात धार्मिकतासे रहित न हो—व्यापार को लोगोंने प्रतिष्ठाका साधन

धना रखा है मगर ध्यान ऐसी नहीं है। व्यापारका प्रयोजन भी
धार्मिकता है गृहस्थोंके लिये यहा व्यापार भी धर्म साधनके लिये
उपयोग्य हो जाना हो यहा फिर कौनसी ऐसी बाधा है जो धार्मिकता
ह मन वचन काय बनाये रखनेमें विघ्न कर सके।

मन्य बंधु—अनंत भव पाय वैभव पाये एक मत्रज्ञानके लिये
ही श्रद्धान समझ लेवें तब लोलुपतासे अवकाश पाकर कल्याणमें
मनुत्साहके अभावसे शान्तिमें स्थित हो सकते।

जीवनका जीवनमें जो मुख्य लक्ष्य होता है वह अर्थ-क्रियाकारी
होना है। यदि मनुष्यभव पानेका यह ही लक्ष्य ठहनामें सोच
लिया जाय कि ज्ञानमात्र स्थिति बनानेका ही मेरा काम बाकी है,
साक्षी निराग, ज्ञाता दृष्टा रहनेके लिये ही अब मेरा अस्तित्व है
तब इस परमस्थिति की ओर ही मन वचन काय की रफ्तार रहेगी।

मैं अधिक क्या लिखूं—शान्तिका सम्बन्ध मात्र शास्त्र ज्ञानसे
नहीं, यह तो स्वभाव साध्य है सो आप सब महली की विशेषता
भी यहही है। अत पानेमें विलम्ब न होगा।

मेरी अतमानना यह ही है जो शान्तिका स्वरूप व्यक्त होकर
तथा स्वातन्त्र्य प्राप्त हो, तथा धर्मात्माओंके निवासके
मैं भी तथा होऊं।

श्री ब्र० सीताराम जी सकुशल हैं। उनका
ला० किशोरीलालजी ला० जिनेश्वरदास जी,
जी आदि सब बंधुओंको दर्शनविशुद्धि—
दर्शनविशुद्धि।

मेरठ—मई २१

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० चेतनलाल जी
परन्तु आपका पत्र आया—
आपका धर्मसाधन ठीक हो

भाव ही परमार्थ है। कोयले की दलाली में काले हाथ होते हैं। पर तो भी उस दलालीमें पैसे हाथ आते। लेकिन परपदार्थोंको आत्मीय माननेकी दलालीमें तो मिलना तो दूर रहा प्रत्युत अनन्त शक्तिमान यह शक्ति रूप भगवान त्याग घर घरकर दुःखी होता है। धर्मदिखाने की चीज नहीं, दिखाने की चीज नहीं, लोगों के वोट पर भी निर्भर नहीं, लौकिक इज्जत पर भी निर्भर नहीं, परमेश्वर पर भी निर्भर नहीं। धर्म तो आत्मरूप है। वह हममें हमसे प्रकट होता है। उसके प्राथमिक बाह्य साधन हैं— सज्जन सम्बन्ध, परमात्मोपासना। भाई जी यदि निर्मोहता और आत्मज्ञान का उदय होजाय तो इससे बढ़कर तो कोई वैभवही नहीं। "चक्रवर्ती की सम्पदा, इन्द्र सारिखे भोग। काकबीट सम गिनत हैं सम्यग्दृष्टि लोग।"

सब भाइयों को दर्शनविशुद्धि कहिये— भाई विमलप्रसादजी को दर्शन विशुद्धि कहिये। उनका पत्र देहरादून का भेजा हुआ कल प्राप्त हुआ था। आप सब अपनी धर्ममंडली में आने व सम्मिलित होनेको विमलप्रसाद जी को खींचते रहें। वे क्यों भागे भागे रहते। उनका स्वास्थ्य अब कैसा है? भाई किशोरीलाल जी, छुट्टनलाल जी आदि से दर्शनविशुद्धि।

इन्दौर — आ० शु० चि०
११—७—५२ — मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० चेतनलाल जी ला० किशोरीलालजी ला० जिनेश्वर दासजी ला० विमलप्रसादजी बा० समन्दरलाल जी ला० मूल चन्द जी आदि सर्वमंडल—योग्य दर्शनविशुद्धि—

परंच—आपका धर्मसाधन ठीक हो रहा होगा। इन्दौर से एक जैनबंधु आनसे ही सुबह इन्दौर ले जाने के लिये आगये हैं।

आपकी और समाज की उन्नति के विशेषरूप से साधन हैं।

१ आप लोगों का स्वाध्याय व २—धर्म शिक्षा सदन। हम लोगों का आना सम्भवतः इन्दौर होगा। सच्चा व्यापार या सेवा यह ही है—जो पर्यायबुद्धि दूर होकर निज द्रव्य के त्रिकालस्थायी स्वभाव पर लक्ष्य हो जिससे मोह राग द्वेष का बन्धन दूर हो। कौन किस मानता फिर किसे प्रसन्न करता है जिससे शत्रुता करता है? सभी आत्मा यहां पर रागद्वेष पर दु:खसे दु:खी होनेमें से गरीब हो रहे हैं। अपनी अपनी गरीबी मिटालें यही बड़ा नेतृत्व है।

हम लोग आपका विशेष कोई कायम निमित्त नहीं होसके इसका रागवश खेद है क्योंकि यदि इन्दौर जाना हुआ तब आप का प्रोग्राम कुछ नहीं कह सकते क्योंकि वहां भी बहुतसा जैनसमाज है। हमारी भावना है जो आप सब सम्यक्त्वमें स्थिर होकर अपना कल्याण करें।

म० सीताराम जी का दर्शनविशुद्धि।

शिमला	आ० शु० चिं०
१—६—५२	मनोहरवर्णी

卐	卐	卐

श्री भाई धर्मवत्सल ला० चेतनलाल जी तथा सत्सङ्ग्य मंडल

योग्य दर्शनविशुद्धि।

पत्र—आपका पत्र आया—अध्यात्मपंचसग्रहकी भाषा जयपुरी है। जो पंक्ति समझ में न आवे उसे कुछ पहिले से और कुछ बाद तक २-२ बार पढ़े और फिर भी समझ में न आवे तब पत्र द्वारा लिख देना कि पृष्ठ नं० अमुक पर अमुक पंक्तिका अर्थ लिखो। कठिन ग्रन्थ तो अवश्य पढ़ना चाहिये चाहे १५ मिनट पढ़े, कठिन भी सरल इसी तरह होते हैं। हमारी व आपकी भी परिणति सब वर्तमानके लौकिक विचारोंके आधारसे हो जाय सो नहीं है—एक निज आत्मतत्त्वका विकास तो ऐसा है कि उसकी ओर झुक जाय लग जाय पीछे पड़ जाय तो उसे होना पड़ता। परन्तु इष्टानिष्ट

पदार्थोंका संयोग वियोग हमारे विचारसे ही होजाय सो नहीं क्योंकि यह परवस्तु है।

भाई! दुःख की कोई बात नहीं। हम यहां चले आये सब भी क्या है। पोस्टविभाग की तो अब भी कृपा है।

आपने जो प्रगति की है मेरा विश्वास है कि यह ऐसी प्रगति है जो वचनों में नहीं कही जा सकती किसी के (मेरे बिना) बिना रुक नहीं सकती।

चातुमास में आप इस प्रकार प्रोग्राम रख सकें तो अच्छा है प्रातः करीब ५ या ४॥ बजे सामायिक। फिर शुद्धिसे निवृत्त होकर स्नान वन्दना, फिर शास्त्रसभा, फिर भोजन व्यापारादि। सायं सामायिक फिर चरचा के धर्मोपदेश का कार्य या सहयोग आदि, फिर शास्त्रसभा, फिर तत्त्व चर्चा फिर शयन। इस तरहका कार्यक्रम हो— इस बीचमें प्रातः दोपहर कभी जब चाहना हो कोई समय थोड़ासा स्वतन्त्र स्वाध्याय करे। एक अध्यात्मग्रन्थ अवश्य सभामें रखना। अध्यात्मपद्यसंग्रह भी उत्तम ग्रन्थ है—

भाई ला० किशोरीलाल जी, भाई मूलचन्द जी, भाई वासुदेव जी, भाई सुमन्दरलाल जी, भाई जिनेश्वरदास जी भाई विमलप्रसाद जी आदि सकलमंडल को दर्शनविशुद्धि।

यहां सेठजी का बहुत ही अधिक आग्रह चातुर्मासका आग्रह है— शेष सकुशल। यहां इन्द्रभवनमें एक वैराग्यभवन है, उसमें हम व ब्र० जीवाराम जी रहरहे हैं। मौन में अधिक समय व्यतीत करता हूँ। स्वाध्याय का समागम अच्छा है।

इन्द्रभवन, तुकोगंज, इन्दौर — आ० शु० चि०
२५—५—५२ — मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान् ला० चेतनलाल जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आपका धर्मसाधन सानन्द होता होगा— १ पुस्तक

अध्यात्मपद्मसंग्रह भेजी है— १० मिनट इसे भी अपनी शास्त्रसभा में पढ़ना—आध्यात्मिक अच्छा ग्रन्थ है। आत्मस्वरूपका निश्चयनय से वर्णन उत्तम अच्छा किया है। श्री भाई किशोरीलाल जी भाई मूलचन्द जी भाई विमलप्रसाद जी आदि सब बंधुओं को दर्शन विशुद्धि कहिये—

स्वाध्याय सामायिक पर विशेष ध्यान रखें — सर्वभव्यमंडलीका जो स्वाध्याय द्वारा विशेषज्ञानका विकास हुआ है उसके प्रति मेरी भावना है कि यह विकास आपका होता हो तो शान्ति की परमसीमा को पहुँचे।

उदासीन भवन तुकोगंज, इन्दौर — आ० शु० चि०
११–६–५० — मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई चेतनलाल जी आदि सर्वमंडली—योग्य दर्शनविशुद्धि।

पत्र—आप सबका धर्मसाधन ठीक हो रहा होगा। अबके ला० बिहारीलालजी छुट्टनलालजी आय उनसे आपका कोई पत्र नहीं आया सो सबका अचम्भा है—आप लोग आने से पहले पत्र डालें कि हम आ रहे हैं तो स्टेशनसे यहां आनेमें कोई कष्ट न होगा।

व्यय और उत्पादका समय एक है जो नवीन पर्याय का उत्पाद है वही पूर्व पर्याय का व्यय कहलाता है। इस विषय को प्रवचनसारमें ज्ञेय अधिकारको पढ़िये। जैसे किसी घड़े को मुँहसे फोड़ दिया तब खपरिया हो गई। वहां खपरिया होना और घड़ा न रहना दोनों एक समयमें हैं। प्रवचनसार के ज्ञेय अधिकारको अवश्य पढ़ना। जो देवायुके उदयका प्रथमक्षण है वही मनुष्यायुके अभाव का व्यय का समय है क्योंकि देवायुके उदय से पहले मनुष्यायु का उदय है उस मनुष्यायुका व्यय नहीं कह सकते। इस विषयमें जो समझ पास न बैठे तब आप यहां आ रहे हैं आपसे मौखिक कहूँगा।

नश नहीं होता। शंका यह भी हो सकती है कि फिर भव्यत्व को पारिणामिक क्यों कहा? भाई जी पारिणामिक का अर्थ यह है— जो कम क उदय, उपशम, क्षय, क्षयोपशम म जो न होवे स्वयं हो वह पारिणामिक है—सदा रहे वह पारिणामिक है ऐसा अर्थ तो नहीं किया। चैतन्यभाव परमपारिणामिक वह कभी नष्ट नहीं होता।

२—मन, वचन, काय के परिस्पंद के निमित्त से आत्म प्रदेशों के परिस्पंद होनेको योग कहते हैं वह बुद्धिपूर्वक हो या अबुद्धिपूर्वक। योग एक समय म एक होता है।

३—प्रत्येक द्रव्य उत्पाद व्यय ध्रौव्ययुक्त है। आत्मा म—जैसे मनुष्यनष्ट देवोत्पन्न आत्माध्रुव। विशेष—जैसा आपने पूछा अंतिम समय में मनुष्य पर्याय है— इसके अनन्तर समयमें देव पर्याय है, अब यहां यह बताना कुछ कठिन है कि मनुष्य पर्यायका नाश कहां हुआ, जैसे ४० वें सैकंड में मनुष्य है ४१ वे सैकंड म देव है यहां सैकंड को समय मानलो। ४० वें समय में मनुष्यायुका क्षय नहीं कह सकते क्योंकि वहां मनुष्यायुका उदय है। ४१वें समय म मनुष्यायु का क्षय या मरण कैसे कहें वहां तो मनुष्य ही नहीं जिसका मरण—तो भी उत्पाद व्यय एक साथ होते हैं अत जो देवका प्रारम्भ समय है वह मनुष्य का व्यय समय है इसलिये उत्पाद व्ययका भिन्न समय नहीं। ४० वें सैकंड म तो न देवका उत्पाद है न मनुष्य का व्यय है। और देखो जैसे आप छुट्टनलाल जी को इन्दौर या बाहर जाते समय भेजने को स्टेशन तक आये। ला० छुट्टनलाल जी तो आगे चले गये और आप स्टेशनसे लौटगये बताओ आपका छुट्टनलाल जी से वियोग कहां हुआ? स्टेशन से स्टेशनपर कहो तो वहां तो आप ये ही झूठ क्यों कहते? आप यही तो कहोगे झूठ नहीं है। और झूठ है भी नहीं। इसी तरह व्यय कहो वियोग कहो देवायुके प्रथम समय में कहा जाता है वही देवका उत्पाद है वही मनुष्यका व्यय है। ला० [illegible]

भाई ! मनुष्यभवके जितने वर्ष गुजर गये उनमें क्या लाभ हुआ इस पर विचार करके कोई अलौकिक धान भवमें जमाने का प्रयत्न करना। किसी दिन शरीर से निकलकर भी जाना होगा तब वर्तमान वैभव की कथा ही क्या ? किसीका कोई सभालनेवाला नहीं। अब परत्वबुद्धि को दूर करके निजविश्राम का उद्योग उचित है। सब सानन्द है।

आ० शु० चि०

शीशमहल, इन्दौर

मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० चेतनलालजी आदि सत्सम्मली योग्य दर्शनविशुद्धि—

आपका कार्ड आया— श्री ला० किशोरीलाल जी ला० छुट्टन लाल जी व आपके ज्ञान व समाचार विदित किये। यहा के भाई आपके ज्ञान के समाचार सुनकर प्रसन्न हुए। पूर्वपत्र मे जो आपने प्रश्न पूछे हैं उनका उत्तर निम्नप्रकार है—

१—भव्यत्वगुणका विपाक (फल) प्राप्त हो चुकने मे सिद्ध भगवानके भव्यत्व गुणके नाश का वर्णन है "औपशमिकादि भव्य त्वानाच।" जैसे कोई छात्र तीसरी कक्षा पास करने पर 'चौथी के योग्य" कहा जाता परन्तु चौथी पास करके भी कक्षा में पहुँचने पर "चौथी के योग्य" उसे नहीं कहा जाता है भव्यत्वगुण रत्नत्रय प्राप्त करने योग्यको कहते हैं, सिद्ध होने पर "रत्नत्रय प्राप्त या पूर्ण करने के योग्य" कैसे कहा जावे। दूसरी बात— पारिणामिक भाव ३ हैं— १–जीवत्व, २–भव्यत्व, ३–अभव्यत्व। उसमे जीवत्व के २ भेद हैं— १–चैतन्य २–प्राणजीवत्व। चैतन्यको परमपारिणामिक कहते हैं। परमपारिणामिक का अभाव कभी नहीं हो सकता। प्राणकर जी ने रूप जीवत्व का सिद्ध भगवान मे अभाव है, भव्यत्व का अभाव है। रही अभव्यत्व की बात सो अभव्यत्व का नाश हो जाय तो भव्यत्व बन जाय या सिद्ध हो जाय सो हो नहीं सकता। अभव्य कभी रत्नत्रययुक्त नहीं हो सकता सो अभव्यत्व का कभी

नाश नहीं होता। शंका यह भी हो सकती है कि फिर भव्यत्व को पारिणामिक क्यों कहा? भाई जी पारिणामिक का अर्थ यह है—जो कर्म के उदय, उपशम, क्षय, क्षयोपशम से जो न होवे स्वय हो वह पारिणामिक है—सदा रहे वह पारिणामिक है ऐसा अर्थ तो नहीं किया। चैतन्यमात्र परमपारिणामिक यह कभी नष्ट नहीं होता।

२—मन, वचन, काय के परिवर्तन के निमित्त से आत्म प्रदेशों के परिस्पन्द होनेको योग कहते हैं यह बुद्धिपूर्वक हो या अबुद्धिपूर्वक। योग एक समय में एक होता है।

३—प्रत्येक द्रव्य उत्पाद व्यय ध्रौव्ययुक्त है। आत्मा में—जैसे मनुष्यनष्ट देवोत्पन्न आत्मभावयुत। विशेष— जैसा आपने पूछा अन्तिम समय में मनुष्य पर्याय है— इसके अनन्तर समयमें देव पर्याय है, अब यहां यह बताना कुछ कठिन है कि मनुष्य पर्यायका नाश कहां हुआ, जैसे ४० वें सैकंड में मनुष्य है ४१ वें सैकंड में देव है यहां सैकंड को समय मानलो। ४० वें समय में मनुष्यायुका क्षय नहीं कह सकते क्योंकि वहां मनुष्यायुका उदय है। ४१वें समय में मनुष्यायु का क्षय या मरण कैसे कहें यहां तो मनुष्य ही नहीं जिसका मरण—तो भी उत्पाद व्यय एक साथ होते हैं अन जो देवका प्रारम्भ समय है वह मनुष्य का व्यय समय है इसलिये उत्पाद व्ययका भिन्न समय नहीं। ४० वें सैकंडमें तो न देवका उत्पाद है न मनुष्य का क्षय है। और देखें जैसे आप छुट्टनलाल जी को इन्दौर या बाहर जाते समय भेजने को स्टेशन तक आये। ला० छुट्टनलाल जी तो आगे चले गये और आप स्टेशनसे लौटगये बताओ आपका छुट्टनलाल जी से वियोग कहां हुआ? स्टेशन से स्टेशनपर कहो तो वहां तो आप थे ही भूठ क्यों कहते? आप यहां तो कहोगे भूठ नहीं है। और भूठ है भी नहीं। इसी तरह व्यय कहो वियोग कहो देवायुके प्रथम समय में कहा जाता है वही देवका उत्पाद है वही मनुष्यका व्यय है। ला० किशोरीलालजी ज्यानं

जी ला० लच्छीरामजी आदि सबको दर्शनविशुद्धि—ब्र० जीवानन्दजी का दर्शनविशुद्धि। भाई जी कल्याणका मिथ्यात्व क्रोध मान माया लोभ—इन पांच गुरुओं के प्रपञ्चों के हटाने में है—हमें कोई ज्ञानमा ही नहीं असहायससार में फिर रहा ऐसा समझकर सौविध्य में अन्तरंग में होलीकी आग सुलगाकर अलौकिक होनेका लक्ष्य रखिये यही चैतन्यप्रभुकी यह आदर्श लीला है जिस लीला के बाद फिर लीला न करना पड़े। शेष सर्व अच्छा है। जो हो सो अच्छा क्योंकि होने बिना तो रहना नहीं अब अच्छेम ही सब शुमार है शुद्धदृष्टि के पास ज्ञान या रहन या लक्ष्य करने वाला जो शुद्ध दृष्टि का ग्रन रखिये फिर कुछ बुरा है [redacted] नहीं। आ० शु० च०

हीरामहल, इन्दौर २५-६-५२ मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० चेतनलाल जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

परंच—आपका पत्र मिला वृत्त अवगत किये—ब्रह्मवा समाजक जैन समाजके महान् आग्रह पर मेरा अन्यत्र जाने का वश न चला। श्री ब्र० जीवानन्द जी व श्री जयानन्द जी आपके प्रान्तमें पहुंचे हैं व मेल पर लायेंगे। 'होना सर्व जगत परिणाम में उनका कर्ता क्या काम।' गुरुकुलकी उत्तरप्रान्तीय समाजकी सद्भावनायें चलायेंगी। मैं अपने को ही जो अध्यात्ममार्ग निश्चित कर चुका उस पर चला नहीं पा रहा तब परपदार्थ जो सर्वथा भिन्न हैं उनपर मुझ आत्माका कोई वश नहीं। मेरी सद्भावना अवश्य यह है कि श्रमवालसमाज में धार्मिक संस्कृति सुदृढ़ बनी रहे और आप सबके आत्मोत्थान के लिये यह तन मन वचन सब कुछ अर्पित हो जाये क्योंकि यह तन मन वचन तीनों विनाशीक पर है इसका सदुपयोग हो और इस निमित्तसे दर्शनज्ञान चारित्र की परिणति अशुभ उपयोग से हटे इसमें मुझे प्रसन्नता है। उत्तरप्रान्त के धार्मिकसुधार के लिये भविष्य में अन्य समाजोंके आक्रमण

से बचानेके लिये आपका गुरुकुल बहुत काम आवेगा। और आपने लिखा कि हस्तिनापुरमें समाजको बहुत लाभ होगा सो भाई जी मैं तो अपनेको अकिञ्चित्कर समझता हूँ। फिर भी मेरा आपके यहाँ आनेका प्रयत्नका यही प्रोग्राम था परन्तु खण्डवा समाजके करीब १०० से ऊपर प्रमुख महानुभाव इधर आते ही आग्रह करने आये मैं उस समय क्या करता। शेष सब शुभ है। समस्त मंडलीको दर्शनविशुद्धि कहिये।

अपने अनादि अनन्त अचल ज्ञान सामान्यतत्वका चिंतन कर सब विकल्पोंको त्यागकर कर्मों के संवर और निर्जरा करनेके पात्र बन रहें यही मेरी भावना है।

खण्डवा (सी० पी०) आ० शु० चिं०
२६-१०-५२ मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० चेतनलालजी योग्य दर्शनविशुद्धि।

परंच — आप सबका धर्म ध्यान ठीक हो ही रहा होगा। अपने विषयमें ऐसा निरन्तर भावना व विचार रखना श्रेयस्कर है कि मैं अनादि अनन्त अचल अपने आपसे अनुभवमें आने वाला समस्त पर द्रव्य गुण पर्यायोंसे भिन्न चैतन्यस्वरूप हूँ। भाई मूलचन्दजीसे दर्शनविशुद्धि कहिये। समस्त मंडली को दर्शनविशुद्धि कहिये।

खण्डवा आ० शु० चिं०
२३-१०-५२ मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई लाला चेतनलालजी योग्य दर्शनविशुद्धि—

परंच आपका पत्र आया। वास्तविक सुख तो शुद्ध चिद्रूप रहनेकी स्थितिमें है जिसके बाद फिर सुखकी बात ही नहीं करना पड़ती—यह स्वभाव सक्षम है परन्तु अहितकारी विकारी अनर्थकारी मोह भावसे [illegible]। भेद विज्ञान द्वारा अज्ञानान्धकार दूर

'रत्तो वधदि कम्मं मुचदि जीवो विरागसंपत्तो।
एसो जिणोवदेसो तम्हा कम्मेसु मा रज्ज।'

समस्त शास्त्रके उपदेशका यही सार है। जो रागी होता है वह कर्म बांधता है। वीतरागी कर्मसे छूट जाता है। श्री आचार्य नमिसागरजी महाराजका समाचार मालूम हो तो लिखना। मालागिरमें पूज्य वर्णीजीका भी पत्र आ गया है। पूज्य महाराजश्री जी इस युगके महानपुरुष हैं।

अप्रैल ४१ आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई चेतनलालजी भाई विमलप्रसादजी भाई किशोरीलाल जी भाई जिनेश्वरप्रसादजी आदि मण्डली योग्य दर्शनविशुद्धि।

परंच—आप सब लोग सानंद धर्म साधन करते होंगे। शास्त्र सभा और धर्म शिक्षा सदनका ध्यान रखिये। विशेष ध्यान की बात यह हो जो क्रोध मान माया लोभकी हीनता हो। जैसा जैसा जीवन व्यतीत हो साथ ही साथ कषाय भी मन्द होवें यह आत्मा-के कामकी बात है। श्री भाई मूलचन्दजी अपने स्वाध्यायकी ज्ञान बढ़ानेके ढङ्गसे करना।

जून ४१ आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई ला० चेतनलालजी योग्य दर्शनविशुद्धि—

परंच—आपका धर्मसाधन ठीक चल रहा होगा। स्वाध्याय व धर्म शिक्षासदन कार्य ठीक चल रहा होगा—भाई मूलचन्द जी सानन्द आप लोगों के बीच बहुत रहते ही होंगे। उनसे स्वाध्याय आदि धर्म कार्योंमें बहुत सहयोग प्राप्त होगा।

इस प्रकार संसारमें जहां कि किसीका किसीसे कुछ तात्त्विक

इस्कर नहीं सार और तात्विक आत्मरहस्य पालेना एक न्याययुक्त अपूर्व लूट है अथवा जिन्न की विजय है। जब कोई अपना होही नहीं सक्ता तो उस कुछ मानने में ही क्या रक्खा ? श्रद्धा में अपने को निर्मम निर्द्वन्द निष्कल सिद्धसम समझ।

सदर मेरठ — सबके कल्याण का इच्छुक

मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० चेतनलाल जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

परन— आप सत्समण्डली सहित सकुशल धर्मसाधन करते हो। सकुशलता निर्मोह भाव में है। आत्मा करता भी तो परका कुछ नहीं पर मानने का तो दुःख लगा है। इसो १—परमशुद्ध निश्चयनय तो द्रव्य के अनादि अनन्त एक स्वभाव को विषय करता है इसकी दृष्टि में तो आत्मा अकर्त्ता ही है। २—शुद्धनिश्चयनय शुद्ध पर्यायवाले द्रव्यको विषय करता है। उसकी दृष्टिमें आत्मा केवल ज्ञानादि स्वाभाविक भावों को करता है जिसमें अनन्त शान्तिमय है। ३—अशुद्धनिश्चयनय—अशुद्धपर्यायवाले द्रव्यको विषय करता है। इसकी दृष्टिमें आत्मा रागादि का कर्त्ता है परका नहीं सो जब परका कर्त्ता नहीं तो पर का लक्ष्य छूटते ही रागादि भी ध्वस्त हो जाते हैं। ४—व्यवहारनय— यह बताता है कि कर्मोदय का निमित्त पाकर आत्मा रागादिमय होता है परके लक्ष्यके आश्रम आ मारम आदि होता। मतलब " ? स्वभाव से नहीं। तो स्वभाव पर दृष्टि दें पर लक्ष्य छूटा और रागादि दूर हुए। अब एक उपचारनय—कडमनय—झूठनय ऐसा रह जाता है जिसका विषय झूठ है—अर्थात् मकान आदि मेरे हैं— सो भाई झूठ अभिप्राय छूटे तो आत्मा का कार्य चले। इस आत्मस्वभाव पर लक्ष्य देकर मोह रागद्वेष समाप्त करें। ज्ञानगोष्ठी में सब आते ही होंगे 'सबको

...न्द जी-धर्मवृद्धि— आत्मसंबोधन

का अनुवाद यहां तक होगया। उसकी सब इच्छा करते हैं जो
सुनना है।

इन्दौर
मई सन् १६४३

आ० शु० चिं० ब्र०
मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान् ला० चेननलाल जी मूलचन्द जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—जयपुर समाप सिरट सत्याग्रह आरम्भ करने को होगई अत यहीं यथायोग होगया। द्रव्यदृष्टि करके प्रसन्न रहना—जगतम अन्य कुछ भी तत्त्व-सार नहीं है— सब पर्यायरूप क्षणिक है मेरा किसने क्या होगा ? आत्मा की सत्य भक्ति करिये इसी में अक्षय लाभ है। सर्व गोष्ठी को दर्शनविशुद्धि।

जयपुर
२८—७—४३

आ० शु० चिं०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० जुगमन्दरदास जी, सभापति, मन्त्री आदि सदस्य गण व श्रीयुत भाई बा० वासुदेवप्रसाद जी मन्त्री योग्य धर्मवृद्धि—

आप स्वस्थ होंगे-तदनन्तर धर्म शिक्षासदन का कार्य यदि सायं ४५ मिनट ही चलता रहे तब आपके बालकों पर आपकी अनुकम्पा होगी। भवभ्रमण करते हुए सुयोग से जिन्होंने नर जन्म पाया है उन्हें वस्तु स्वरूप का बोध हो जाय तो उस श्रद्धा के हेतु संसार से पार होने व सदगुरुओं से मुक्त होने का प्रयत्न कर लेंगे। जीवन तन, मन, धन, वचन सभी अध्रुव है। शुद्धात्मतत्त्वके विश्वास में इनका उपयोग सदुपयोग है। अतः मेरी सम्मतिमें इस पत्रको आप ज्ञान गोष्ठी में रखकर विशेष विचार करें। ४५ मिनट समय अधिक हो तो ३० मिनट रक्खें (पढ़ाने वाले ३-४ सज्जन चाहियें फिर काम में क्या बाधा) ठीक समय पर शुरु होकर ठीक समयपर

गत। शेष सब ठीक है। यदि बालकों का पुण्योदय होगा तो आप लोग इसमें निमित्त बनेंगे। सो इसमें मुझे प्रेरक न समझना, उपरक्त आपका भाव होगा और निमित्त प्रेरक छात्रों का पुण्योदय होगा। सर्वमण्डली को धर्मवृद्धि—

८-१-४१

आ० शु० चि०
सहजानन्द

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई विमलप्रसाद जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—धर्मसाधन ठीक हो रहा होगा। कौटुम्बिक जालसे निवृत्त पुरुषों को जीविकार्थ परिमित परिग्रह ही रखकर निरारंभ होकर धर्म ध्यान में विशेष प्रवृत्त होनेको बढ़ना चाहिये।

११-४-४३

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई जी बा० सुमतिप्रसाद जी वकील योग्य धर्मवृद्धि—

पत्र—अभी श्रीयुत भाई मूलचन्दके पत्रसे ज्ञात हुआ कि अनितका देहान्त हो गया है। संसारही दुःखका स्थान है। यहां दुःख न हो तो क्या निराकुलता रहे। संसार का स्वरूप जानकर आत्मनिर्मलता से संतोष करें। शोक से सिवाय नवीन कर्मबंध के और कोई प्राप्ति नहीं। संसारके जीवोंके ऐसे जन्ममरण अनादि से होते आये हैं। यह जीव अनादि से निम्नस्थानपद— निगोदमेंरहा विकास होते होते कीड़े मकोड़े से निकलकर पशुगति को भी पारकर कठिनतासे मनुष्य भव मिलता सो भी मरना पड़ता। मरनेका क्या दुःख करना दुःख तो इस बात का होना योग्य है कि श्रेष्ठ नरजन्म पाकर धार्मिकलाभ पूरा न हो पाय। यह बात हम दूसरों पर ही न घटावें स्वयं पर हम इस बातको सोचें कि हम यदि धार्मिक लाभ न लेकर क्या किया। इस विषय में क्या बताया जावे।

संसारमें जितने आत्मा हैं सब भिन्न भिन्न हैं कोई किसी का नहीं हैं, सम्बन्ध मानना ही भ्रम है। यह भ्रम तभी होता है— जब शरीर से विपरीत लक्षण वाला अखंड चेतन ज्ञान में नहीं आता। यह प्राणी कितना ही परको अपना माने किन्तु अणुमात्र भी उसका नहीं हो सकता। मनुष्य श्रेष्ठमनवाला जीव है इसके लाभकी सफलता स्वयं के पहिचानने और स्थिर होने में है। अतः अब शोक को छोड़कर आप दोनों धर्म-शान्ति के मार्ग व वस्तु स्वरूप के अवबोध स्वाध्याय में अधिकतया लगिये। मुझसे भी जो कुछ हो सकेगा आपकी वैयावृत्य इस विषयक हो सकेगी। आत्मा को एकाकी जानकर निर्मलता पाइये। यह पत्र अपनी माताजी भी सुना दना धैर्य से काम ले बारह भावना का स्मरण करें। आपको ज्ञान, प्रतिष्ठा सम्पदा, मनप्रियता आदि अनेक बातों से सम्पन्न हैं। बड़े बड़े तीर्थंकरोंको भी इष्टकी शान्तिके अर्थ तपस्या करना पड़ा। अब कुछ कुछ चिन्तना के एवज, लौकिक कार्यमात्र एक देहली का रखकर शेष समय स्वाध्याय में लगावें।

ईसरी — आ० शु० चिं०
१२—१—५४ — मनोहरवर्णी "सहजानन्द"

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई बा० महेशचन्द जी—योग्य दर्शनविशुद्धि—

परच—आपका पत्र आया—स्वास्थ्य शारीरिक ठीक न जानकर खेद हुआ। अब स्वास्थ्य अच्छा होगा। अपने आपको स्वतन्त्र एकाकी ज्ञानपुञ्ज सबसे निराला परके सम्बन्ध से अत्यन्त पृथक— जैसे कि हैं जानकर प्रसन्न रहना। व्यवहार के काम व्यवहारके हैं, करना तो पड़ता ही है। यदि कार्य अधिक आ पड़ा हो तो सहयोगी विशिष्ट क्लर्क नियुक्त करनेको कलेक्टर आदि जो अधिकारी हों- से कहना या छुट्टियां आपको चाहियें हो तो ले लेना। आत्मसम्बोधन का कार्य भी बंद रखना या अनुवाद में मनके बहलाव से आराम

अचता हो तो भी कम करना। अपने आपके विषयमें यह देखना कि मैं सत् (उत्पाद व्यय ध्रौव्यात्मक) स्वत सिद्ध, अनादि, अनंत, असहाय, असख्य चेतन पदार्थ हूँ फिर भी बहुप्रदेशी हु, प्रत्येक प्रदेश अनन्त गुणमय है, प्रत्येक गुणमे अनन्त डिगरिया हैं, इन सबका एक पिण्ड तन्त रूप अभिन्न मैं आत्मा अपने रूपसे हूँ, परचतुष्टयका लेश भी प्रवेश नहीं। दिनेश परीक्षाम उत्तीर्ण होगया होगा। दिनेशकी माताको धर्मवृद्धि। स्वाध्याय नियमित रखना।

इन्दौर आ० शु० चि०
११-६-४३ मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

धायुत भाई सा० महेशचन्द्रजी योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आपका स्वास्थ्य व धर्म साधन उत्तम होगा। तदनन्तर हम लोग इन्दौर समाजके आग्रहसे २८-५-४३ को इन्दौर आ गये हैं। यहा करीब १ माह रहनेका प्रोग्राम है। परिवारको दर्शनविशुद्धि सत्य शान्ति तो अपने आपके निर्विकल्प अवस्थाम है, देव शास्त्र गुरुके विकल्प भी परम्परा सहज शांतिके रूप नहीं हैं। उनकी भक्ति अपने स्वरूपमें समाजके लिये है। जगतके प्राणी, मनुष्य प्राय वैभव सग्राहमें जुट रहे हैं जुटकर कभी मनुष्यभव छोड़कर जायेंगे, सब यहीं पड़ा रहना। जीवन कालमें भी जो प्रमत्त हो जाते वे भी शान्ति पहुँचानेमें अशक्त हैं। इसलिये सबसे बड़ा काम करनेको यह है कि जगतका अपना यथार्थ स्वरूप जानकर ज्ञानमय निज आत्माम झुककर विश्राम करना। इस हितकारी श्रद्धामें हम आप लोग संसार दुःखसे अवश्य मुक्त होंगे। दिनेशको आशीर्वाद। ज्ञान गोष्ठीमें तो आप जाते ही होंगे। मन महलीको धर्मस्नेह कहियेगा। आत्मसम्बोधनका अनुवाद कहा तक हुआ? उसम भी अधिक परिश्रम नहीं करना। १ घंटा समय काफी है। सदा कुछ विश्राम करते रहना।

इंदौर　　　　　　　　　　　　　　　　　आ० शु० चि०
२७-५-४३　　　　　　　　　　　　　　　मनोहरवर्णी

卐　　　　　卐　　　　　卐

भैया मूलचन्द—

करना ही क्या शेष है संसारमें जो मार न हितहो—आत्माकी भलाई इसीमें है जो परवस्तु की आशा करेंही नहीं तथा परवस्तुका समागम भी कमसे कम रखें—आप १ या २ घंटा समय परोपकार में (जिसम आपका उपकार रक्ख है) लगाते रह। सब संयोग क्षणभंगुर है। प्रत्येक आत्मा अपने कषायकी चेष्टा करता हुआ जीवन व्यतीत कर रहा है—परम उस न कुछ हानि लाभ हो रहा मगर विकल्पसे अपने सुखको हटाकर रहा है।

मनुष्यमें सबसे बड़ा रोग है जो यश प्रतिष्ठा चाहनेका। ज्ञानी पुरुष न तो यश प्रतिष्ठा चाहता न अपयश अप्रतिष्ठामें घबड़ाता—ज्ञानी तो अपने अविकार स्वभावके लक्ष्यमें अपना उत्थान और स्वरूपसे च्युत होनेमें अवनयन समझता है। जिसके लिये हम अहर्निश चिन्ता करते व क्या कर देंगे। यदि आपको कुछ मिलनेकी आशा हो तो बतावें। मेरी श्रद्धामें तो कोई परपदार्थ कुछ भी देनेमें समर्थ नहीं है। बाग तो बाग ही रहना।

शिमला　　　　　　　　　　　　　　　　　आ० शु० चि०
५-६-४२　　　　　　　　　　　　　　　　मनोहर

卐　　　　　卐　　　　　卐

नोट—यह निम्नलिखित पत्र निम्नलिखित प्रश्नो के उत्तर म है—

१—क्या शुक्लध्यानी नियमसे मोक्ष जाता है ?

२—क्या नकम किसी समय मुक्त होता है ? होता है तो किस समय ?

३—आत्माका स्वभाव ज्ञाता द्रष्टा बतलाया है। "ज्ञाता पर पदार्थके जाननेवाला और द्रष्टा अपनी आत्माको जानने

वालेको कहते हैं ' क्या यह वचन ठीक है ? समस्त आत्माओंमें इष्टपना कैसे बनता है क्योंकि वहां कारण लेकिन तो है ही नहीं !

४—क्या १३वें गुण स्थानमें मनोयोग भी होता है ? होता है तो कैसे ? क्या वह मनसे कुछ विचारते हैं ?

५—सच्चा देव उसे कहते हैं जो वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी हो। क्या यह सब लक्षण मूकवली और अन्तकृत केवलीमें पाए जाते हैं ? अगर उनमें नहीं हैं तो वह सच्चे देव कैसे कहे जाते हैं ?

६ आप्त किसे कहते हैं ? क्या सभी अर्हत आप्त हैं ?

७—क्या जमीकन्दका त्यागी मूंगफली, अमरूद, सूठ खा सकता है ?

८—क्या रात्रिका बना हुआ सिक, हुई मटर कुछ, चौलाई खा सकता है ?

× × ×

श्री भाई मूलचन्दजी आप सानन्द रहें।

परम—आप सब सकुशल होंगे। आपके प्रश्नोंका उत्तर भेज रहे हैं। विवाद प्रश्न निश्चयों। हम ठीक उत्तर देवेंगे।

१—क्षपक श्रेणी वाला होता।

२ - तीर्थ करके जन्म समय कुछ दुख कम होता है।

३—ज्ञेय पदार्थोंमें आत्मा विशेष ज्ञान है और जब ज्ञान नहीं करके सामान्य प्रतिभास है तब दर्शन है संसारी आत्मामें होता। जब विशेषका नहीं तब सामान्य है सामान्य प्रतिभासका परपदार्थ तो है नहीं आकारादि कहा और अतः सामान्य अवलोकन एकाग्र समय

४—द्रव्य मनोयोग होता है, विचारते कुछ नहीं। मनोवर्गणा का आना जाना आदि होना है।

५—देव शुद्धात्माको कहते हैं। सर्वज्ञ वीतराग हितोपदेशीको आप्त कहते हैं।

६—रत्नकरण्ड ५में श्लोकमें देखिये। हितोपदेशी अरहंत आप्त हैं मगर शेषको अनाप्त भी नहीं कह सकते।

७—इसमें अदरख व सचित्त हल्दी नहीं खा सकते।

८—तिलकुट्ट, चौलाइ अन्नमें है। त्यागीकी विधि खाद्य स्वाद्य लेह्य पेयसे है। किसीके रात्रिको खाद्यका त्याग है किसी के चारोंका। अन्नकी चीज खाद्यमें अधिक सम्बन्ध रखती है सो खाद्यका तो नाम भूल गये अथवा त्याग न बैने तो अविरत अवस्थामें जघन्य भी नियम यह है कि रात्रिको जल औषधिके अतिरिक्त और कुछ न लेवे। जब नहीं चलती तो लोग ऐसा कर लिया करते हैं। अन्यथा त्याग चल उठा। खाद्यमें अन्नके सिवाय और भी चीज हो सकती हैं जो पेट भर दें अधिक खाई जा सकें। हरी मटर सूखने पर अन्न है।

आ० शु० चि
मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीमान भाई मूलचन्द जी योग्य दर्शनविशुद्धि।

परच—आप सकुशल धर्मसाधन करते होंगे। तदनंतर आप अपना प्राइवेट स्वाध्यायमें अर्थ प्रकाशिका जरूर रखिये। उसमें प्रमेय बहुत है। अर्थ प्रकाशिका तत्त्वार्थसूत्रका विशद और विस्तृत विवेचन है। मोक्षशास्त्र व चौबीसठाणाको भी कभी देखते रहना चाहिये। ज्ञानमय तो यह आत्मा स्वयं है परंतु आवरणके कारण उसका विकास नहीं होता सो आवरणके विनाशका बुद्धिपूर्वक

यही प्रयास है जो ज्ञानका अपना हितबुद्धि रख कर करें। आपसे समाजका कल्याण होगा। अपने सद्गृहस्थ बननेका आदर्श रखना इसमें आपको व समाज को लाभ है। आपकी प्रवृति आपके होनहार की सूचक है। इस क्षणिक ससार में इस क्षणिक पर्यायको पाकर अक्षयपदके लाभका उद्यम करना महान् श्रेयस्कर है।

मेरठ — आपका हितचिन्तक

२७—४—५१ — मनोहर

卐 卐 卐

श्रीमान् भाई मूलचन्द जी योग्यइच्छानिशुद्धि।

परच— आपका पत्र आया। समाचार जाने। आप एक आसन्न भव्य आत्मा है। आपके गुणसे ही हम आपमें स्नेह है। आप प्रात जल्दी यानी सूर्योदय से कम से कम १॥ घंटा पहले उठें। बादम निबटकर आप स्वाध्याय में १ घंटा लगावें। इस स्वाध्याय म आप अर्थप्रकाशिका रखे चाहे कठिन भली हो। जो समझ में न आवे पत्रद्वारा मुझसे पूछते रहें। सागारधर्मामृत अच्छा ग्रन्थ है। जीवन कैसे शान्तिसुखमय व्यतीत हो यह सब उत्तर सागारधर्मामृतम मिल जावेगा। जो उसमें लिखा है वह जीवनमें उतारनेकी चीज है।

- जीवस्थान यथापूर्ण लिख चुका हू तथा करीब आधी लाख भी चुका हू। श्री १०५ क्षु० चिदानन्द जी यदि अभी ठहरे हों तो उनसे इच्छाकार कहिये।

आप अपनी दिनचर्या का एक प्रोग्राम बनालें और उसके अनुसार विशेष अवसरके अतिरिक्त रोजचर्या करें ऐसा करने से आपका समय व्यर्थ न जायगा और कार्य निराकुलतापूर्वक होंगे। जैसे हम नीचे लिखते हैं आप उसमें सुधार लेना —

प्रात ५॥ बजे से ६॥ बजे तक स्वाध्याय

" ७॥ " " स्नान आदि

८॥

८॥	,,	,,	१०	,,	,,	दुकान
१०	,,	,,	११॥	,,	,,	भोजन विश्राम
११॥	,,	,,	४	,,	,,	दुकान
४	,,	,,	५	,,	,,	शुद्धि भोजन
५	,,	,,	७	,,	,,	विश्राम व अन्य कार्य धर्म शिक्षा सदन
७	,,	,,	७॥	,,	,,	सामायिक आदि
७॥	,,	,,	८॥	,,	,,	शास्त्रसभा
८॥	,,	,,	९	,,	,,	तत्त्व चर्चा
९	,,	,,	४॥	,,	,,	शयन
४॥	,,	,,	५॥	,,	,,	जागरण कायोत्सर्ग

जीवस्थान यथार्थ पूर्ण होनेके बाद आत्मभावना लिखूंगा ऐसा विचार है। यहां [illegible] बड़े महाराज जी १५ जनवरी तक ठहरेंगे आप आसकें तो अच्छा अवसर है। श्री ला० मित्रसैन, नाहरसिंह जी से दर्शनविशुद्धि। दोनों सत्पुरुष हैं। श्री भाई चेतनलाल जी— भाई किशोरीलाल जी आदि बंधुओंसे दर्शनविशुद्धि कहिये— ला० किशोरीलाल जी आसकें तो अच्छा अवसर है।

इटावा

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भैया मूलचन्द जी योग्य दर्शनविशुद्धि।

पत्र। आपका व सेठ ला० मित्रसैन नाहरसिंह जीका धर्मध्यान ठीक प्रकारसे चल रहा होगा। अपने अभिप्राय को निर्मल निर्मोह बना लेने के समान उत्तम कुछ अन्य जगत में है ही नहीं। दृश्यमान तो क्षणभंगुर है। धनकी तो उचित व्यवस्था उत्तम करते हुये भी आत्मस्वरूपकी ओर विभोर रहनेमें शान्ति है। श्री ला० सुमतिप्रसाद

जी से दर्शनविशुद्धि कहना। श्री भाई किशोरीलाल जी व छुट्टनलाल जी से दर्शनविशुद्धि। सर्वमण्डली को दर्शनविशुद्धि कहिये।

इन्दौर
२८-३-५२

आ० शु० चिं०
मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्री भाई मूलचन्द जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

भाई जी आपके पास पत्र भेजा क्या पहुँचा नहीं ? अपने जीवन का ध्येय एक यही प्रधान रखना कि सर्व विकल्पों से मुक्त होकर आत्मा ज्ञाताद्रष्टा स्थिति बनानी है। श्री भाई चेतनलाल जी बा० महेशचन्द जी आदि सर्वमंडली को दर्शनविशुद्धि।

इसरी
७—१—५४

आ० शु० चिं०
मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० मूलचन्द जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

परच आपका पत्र आया वृत्त जाने।

जैन समाज मुजफ्फरनगर द्वारा हो रहे वीर जयन्त्युत्सवमें जैन कुमारसभा द्वारा जो पञ्चकल्याणकका चित्र दृश्य दिखाये जानेका कार्यक्रम है वह अच्छा एवं स्फूर्तिदायक है। इससे इतिहासके नायकोंकी विशुद्धि धार्मिकताके हृदयसे अपनी निर्मलताको प्रोत्साहन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त स्वाध्याय व सत्समागम बढ़ानेके लिये भी एक हमारा सुझाव है जैनसभा इसी प्रकार अपने धार्मिक प्रोग्राम, विचार तथा आचारमें वृद्धिगत हो।

आपके भेजे हुए कुछ प्रश्नों के उत्तर मौखिक हो ही गये थे। फिर " अच्छा " प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार हैं।

(अ) मनुष्यायुके अभाव और देवायुके प्रथमोदयका समय एक ही है तब देवपर्याय का उत्पाद और मनुष्यपर्याय का जीववस्तु का ध्रौव्य इस तरह उत्पादव्यय ध्रौव्य सिद्ध है।

(आ) आरम्भत्याग प्रतिमासे ऊपर वाला अपने कपड़े प्रासुक जलसे साधारणतया धो सकता है तथा अन्यपुरुष साधारणतया या विशेषतया धोना चाहे तो धो सकता है।

(इ) सिद्धभगवान ने जो पहिले जाना वही अगले समयमें जानते हैं तो भी पहले समयकी जाननक्रिया अन्य है दूसरे समयकी जाननक्रिया अन्य है। परिणमन (वर्त्तना) न हो तो जानने का कार्य समाप्त हो जायेगा फिर अगले समय में जड हो जायेगा।

(ई) अब तक ऐसा समझा गया है कि चैतन्यभाव करि तो अभव्यमें भी सिद्ध होने की शक्ति है परन्तु व्यक्त होने की योग्यता नहीं चाहे कारण भी मिल जावें। दूरानदूरभव्य मे सिद्ध होने की व्यक्त होने की शक्ति है परन्तु कारण मिलते ही नहीं।

(उ) छटे गुणस्थान मे १—इष्टावियोगज, २—अनिष्टसंयोगज ३—वेदनाप्रभवये तीन आर्त्तध्यान हो सकते हैं।

(ऊ) जीव पुद्गलका गमन हो या हलनचलन हो सबम धर्म द्रव्य निमित्तमात्र है।

आप सब ज्ञानगोष्ठी के सदस्यों का प्रवचन कार्य ठीक चलरहा होगा। यहां धर्मशिक्षासदन बिना अन्तरकाल के चला जा रहा है। सर्वमण्डली को दर्शनविशुद्धि।

देहरादून
२४-३-५२

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

नोट —यह निम्नलिखित पत्र निम्नलिखित प्रश्नोंके उत्तरमें है —

(१) षट गुणी हानिवृद्धि किसे कहते हैं?

(२) एक बार सम्यक्त्व होनेके बाद दोबारा कितने समय तक सम्यक्त्व नहीं हो सकता?

(३) ८४ लाख योनियां कौन कौन होती हैं?

श्रीयुत भाई मूलचन्दजी योग्य दर्शनविशुद्धि—

१—षटगुणी हानि वृद्धि अनुमान व आगमसे गम्य है। अतिन्द्रिय प्रत्यक्ष ज्ञानियोंके प्रत्यक्षगम्य है।

अनंतभागवृद्धि असंख्यातभागवृद्धि संख्यातभागवृद्धि असंख्यात गुणवृद्धि अनन्तगुणवृद्धि ये तो वृद्धि स्थान हैं और अनंतभाग हानि असंख्यातभागहानि संख्यातभागहानि संख्यातगुणहानि असंख्यात गुणहानि अनंतगुणहानियें हानि स्थान हैं। पदार्थ प्रतिसमय परिणमन करता ही रहता है। परिणमन दृष्टिकी अपेक्षा हानिवृद्धि रूप है अथवा परिणमन उत्पादव्ययस्वरूप है। जो व्ययांश है वह हानिरूप है जो उत्पादांश है वह वृद्धिरूप है। जो उत्पाद होता वह थोड़े से हो होकर अनन्तगुणवृद्धि रूप होता है। जो व्यय होता वह भी थोड़े से हो होकर अनन्तगुण हानि होता। परिणमन प्रक्रिया अतिसूक्ष्म है। उसमें य हानिवृद्धि गर्भित हो जाती है। अथवा जैसे तिल्लोरी कायम न कुछ आता न कुछ जाता न कम होता न बढ़ होता तथापि उसकी कान्ति एक ओरसे हानि व एक ओर वृद्धिरूप होता है। अथवा आत्माके अनन्तगुणों में एक गुण (जैसे सत्ता) के परिणमन की वर्त्तना सो अनंत भागवृद्धि, असंख्यात गुणों की दरजकर उसमें एक गुणकी परिणमनवृद्धि सो असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुणोंमें (जैसे सिद्धके गुण) एक गुणका जो परिणमना सो संख्यातभागवृद्धि। संख्यातगुणोंका परिणमनरूप वृद्धि सो संख्यातगुणवृद्धि असंख्यात गुणों का परिणमन सो असंख्यातगुणवृद्धि अनंतगुणोंका परिणमना सो अनंतगुणवृद्धि। उनका परिणमन होकर द्रव्य में अन्तर्लीन होना सो क्रमशः उनकी हानि अथवा परिणमन तो होना ही है वह हानि वृद्धिरूप स्वभावतः है अन्यथा परिणमन कैसे? समझ में न आवे तो न सही, यही सूक्ष्मतया षटस्थान पतित है।

२—एक ... होनेके बाद

असंख्यातवें भाग काल तक नहीं होता यह काल असंख्यात यपरूप है।

३—योनियां ६ हैं और उनके अविभागप्रतिच्छेदरूप की तरह अनेक भेद हो जाते हैं। जैसे शीत, कोई कमशीत, कोई अधिक शीत, कोई उससे अधिक शीत आदि इस तरह ६ में भेद अश हो जाते हैं जिससे मनुष्य के भी १४ लाख योनि होती हैं मण्डला को दर्शनविशुद्धि—

देहरादून

आ० शु० चि०
मनोहर

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई मूलचन्द जी—योग्य दर्शनविशुद्धि—

पत्र—आपका पत्र जो मेरठ पहुँचा था वह इन्दौर मिलगया। आप सब सकुशल होंगे। आपने जो प्रश्न पहिले भेजे थे वे मिल नहीं रहे आप दुबारा लिखकर भेज देने। वस्तु स्वरूप, निमित्त की दृष्टियां रखकर विचार किया जाता है तब ही वस्तु का पूर्ण निर्णय होता है। १—दो द्रव्यों के बंधपर्याय की दृष्टि से। २—स्वपर—कारणक एक द्रव्य में हुई, पर्याय की दृष्टि से। ३—स्वप्रत्ययक एक द्रव्य में हुई पर्याय की दृष्टि से। पहिले का विषय यह सब स्थावर जगम प्राणिसमूह है। दूसरे का विषय रागाभिमान है। तीसरे का विषय शुद्धपर्याय है। ज्ञान गोष्ठी का कार्य ठीक चल रहा होगा। श्री भाई चेतनलाल जी आदि मण्डली को दर्शनविशुद्धि कहिये। श्रा० महेशचन्द जी सकुशल होंगे। हमारा विचार ४१ दिन में ही यहां से चलने का है। वर्षायोग का जहां निर्णय होगा उस स्थान पर पहुंचकर या पहले आपको सूचना दूगा।

इन्दौर
३०—६—४३

आ० शु० चि०
मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई मूलचन्द जी योग्य दर्शनविशुद्धि—

परच—आप सब गोष्ठीसहित सप्रसन्न धर्मसाधन करते ही होंगे— तदनन्तर आपने प्रवचन के साराश को लिखने के लिये कहा सो किसी प्रकार आपके पास पहुँचेंगे। भेदविज्ञान वस्तुस्वरूप की चर्चा करके सामायिक में इन बातों पर विचार करना चाहिये। आत्मतत्त्व की दृष्टि पानेमें बढ़कर और कुछ वैभव नहीं है। संसार के अनित्य पदार्थों की अटकी हो तो आने— आप सबको अटक नहीं रहना चाहिये— भाई ला० चेतनलाल जी, किशोरीलाल जी आदि सर्वबन्धुओं को दर्शनविशुद्धि— ब्र० रामानन्द जी सकुशल होंगे धर्मवृद्धि कहना।

जयपुर
८—८—४३

आ० शु० चिं०
मनोहरवर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाइ मूलचन्द जी— योग्य धर्मवृद्धि—

परच आप सकुशल होंगे—आपका पुराना पत्र भी मिलगया और ताजापत्र आज मिला। शंकाओंके समाधान निम्नप्रकार हैं—

१—साधारणतया अर्थात् शब्द में विकल्पों में भेदविज्ञान मिथ्या दृष्टि के भी हो जाय परन्तु यदि श्रद्धा में आता हुआ भेदविज्ञान हो जो वस्तु के अभेदस्वरूप में पहुँचने का पूर्ववर्ती हो पाता तो मिथ्या दृष्टि नहीं रह सकता। जो चार लब्धियां अभव्यक भी हो जाती हैं वहां परिणामों में उज्ज्वलता तो है ही भेद विज्ञान भी उनके होता किन्तु वह सम्यग्दर्शन के बिना सम्यग्ज्ञानरूप नहीं है। साधारणतया भेदविज्ञान हो जाय और सम्यक्त्व न भी हो परन्तु तत्त्वत भेद विज्ञान सम्यक्त्व के बिना नहीं होता। भेदविज्ञा[illegible] का कार्य है सम्य[illegible] का कार्य है।

२— [illegible] का साधारणतया
जिसमें काय [illegible] है और अन्य

सम्बन्ध रखनेवाले (जिनके होने पर हो, न होने पर न हो) निमित्त हैं। निमित्त के अभाव में स्वाभाविक कार्य होना वहा भी कालद्रव्य उदासीन निमित्त है।

३—शुद्र के विषय म पुराने अनुभवी महापुरुष और भी स्पष्टतया बता सकते हैं।

४—पेड़ से गिरे हुए पत्ते मे जीव यह समूचे वृक्षवाला एक नहीं रहता है यदि असमय में वह पत्ता गिरे तब अन्य प्रत्येक स्थावर हैं। कुए से जल निकलने पर जल में एकेन्द्रिय स्थावर रहते हैं।

कोडरमा आ० शु० चि०
१८—१—५४ सहजानन्द

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई ला० मूलचन्द जी योग्य धर्मवृद्धि—

पत्र—आपका पत्र आया था। चैतन्यस्वरूप! तुम वही चेतन तो हो जैसा सिद्ध है। एक परलक्ष्य ने ही मात्र सारी अवस्था बिगाड़ दी है। अवस्था बिगड़ने पर भी स्वभाव वही है, परलक्ष्य हटते ही स्वभावदृष्टि हो जाती है। स्वभावदृष्टि करते ही परलक्ष्य हटजाता है। देखो भैया धर्मका उपाय कितना सरल है। कितनी ही परिस्थिति आवो, बाह्यपदार्थ की स्वप्नमें भी इच्छा न करना। होता क्या है बाह्यसमागमसे मात्र आपत्ति (विभाव) का निमित्त। अपना शुद्ध लक्ष्य बनाकर पक्का दृढ विश्वास करना। जगत म अनन्तभव पाये हैं यह भव कुछ अनोखा नहीं है। हा यदि बाह्य की दृष्टि दूर कर निजका कल्याण कर लिया जावे तो अनोखे कार्य का प्रारम्भ होने से यह अनोखा भी है। एक बार सत्यविचार करके भीतर मे हा कहदो कि मुझे आत्मस्वभाव की स्थिरता के यत्न के लिये ही वर्तमान का उपयोग करना है। इस कार्य के बिना ही तो घूमे। लोकोंकी जानकारीसे अपने को क्या मिलेगा और जड समागमसे अपने को क्या मिलेगा और खूब सोच लो। गहरीस

रह रहे तो व्यापार के लिये नियत समय रखना ६ घंटा काफी है फिर जैसा मममें प्रात १॥ घंटा या १ घंटा नित्य स्वाध्याय म अवश्य लगाना शेष धर्मध्यान जैसा करते हो करते रहना। श्री ला० चेननलाल जी आदि सब म धर्मसे धर्मवृद्धि कहना—

रफीगंज
१-३-४४

आ० शु० चि०
सहजानन्द

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई मूलचन्द जी योग्य धर्मवृद्धि।

पत्र—हमारा पत्र जो आपकी शंकाओं के कुछ उत्तररूप था पहुँचा होगा—ज्ञान गोष्ठी में १५-२० मिनट को पत्र कठिन ग्रंथ आध्यात्मिक रख लेना, कठिन ही कई बार पलटने पर सरल होजाता है। अध्यात्मचर्चा छप गई है उसे ज्ञानगोष्ठी म स्वाध्यायार्थ रखना। गोस्थानचर्चा छप गया है उसेभी आप एक बार तो जरूर देख लेना समस्थानमूल निषय दर्पण छप गया है उसे रखकर भेदों के विचार भी करना। अस्तु

भाई मूलचन्द जी तुम दुकान आदि काम मर्यादित समय रख कर करना ऐसा प्रोग्राम बनाना जिससे तुम्हें कम से कम ३ घंटा समय स्वाध्याय के लिये मिल सके यह इस प्रकार हो सकता है— जैसे १ घंटा सूर्योदय से १॥ घंटा पूर्व उठकर १ घंटा। प्रात ३० मिनट शास्त्रसभा में। रात को १॥ घंटा इसमें चाहो तो आधा घंटा बच्चों को धर्मशिक्षा भी दे सकते हो। श्री भाई ला० चेननलाल जी आदि सबको धर्मवृद्धि कहना।— के क्षेत्र का परकी रुचि

हजारीबाग
३०-१-४४

आ० शु० चि०
सहजानन्द

卐 卐 卐

श्रीयुत बा० आनन्द प्रकाश जी जैन।

योग्य धर्मवृद्धि।

परंच—आपका स्वास्थ्य व धर्मसाधन ठीक चल रहा होगा। आपका बहुत दिनो से कुशल पत्र नहीं आया सो देना। स्वाध्याय में प्रवृत्ति रखने का ख्याल न भूलिये आजकल ५ बजे से ६ बजे तक प्रातः काल का समय सामायिक स्वाध्याय के लिये रखिये। हाथ पैर धोकर सामायिक स्वाध्याय कर सकते हैं। स्नान परचात् कर सकते हैं। किसी दिन अशुचि हो जावे तब कपड़ा बदल कर कर सकते हैं। स्वाध्याय में प्रमाद न करना। आत्मा का स्वभाव ज्ञान है उसके विकास का यत्न रखना। परिवार को धर्मवृद्धि। बच्चों को आशीर्वाद।

६-८-५४ आ० शु० चि०

मनोहर लाल वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई जी महावीर प्रसाद जी योग्य धर्मवृद्धि।

आपका पत्र आया स्वास्थ्य व धर्मसाधन ठीक चल रहा होगा। हमारा स्वास्थ्य ठीक है। आपका स्वाध्याय सामायिक ठीक चलरहा होगा। ज्यों ज्यों दिन व्यतीत होते जावे मनुष्य की आयु भी घटती जाती है। संसार के किसी पदार्थ में आत्मा का सुख नहीं है। यह सारा समागम धोखा है अपने आत्मा की खबर लेना सबसे उत्तम काम है। सो सामायिक स्वाध्याय व छहढाला की ढालें पढ़ना व आत्मा कीर्तन का मनन करना इतनी बात कभी नहीं छोड़ना चाहें बाहर जावें तो वहां भी करना चाहे कम करसको

कुछ परवाह नहीं। किसी भी प्रसंग पर कोई चिन्ता नहीं करना, आत्मा तो भगवान् के स्वभाव समान है बाह्य पदार्थों का आश्रय क्या चिन्ता करना। सब समाचार दना। धरम की तबियत आदि का हाल भी लिखना यह बहुत भद्र प्रकृति की है। आप दोनोंमें सम्यग्ज्ञान की वृद्धि हो और सत्यसुख का मार्ग पावें। श्री भाई सुमतिप्रसाद जी डालमदीयान को धर्मवृद्धि कहना। श्री पं पिन्हारीलाल जी को धर्मवृद्धि कहना।

आ० शु० चिं०
मनोहरलाल वर्णी

卐 卐 卐



बी० के० रस्तोगी के प्रबन्ध से बाँन प्रेस, मेरठ में मुद्रित।

श्रीयुत बा० आनन्द प्रकाश जी जैन।

योग्य धर्मवृद्धि।

परच—आपका स्वास्थ्य व धर्मसाधन ठीक चल रहा होगा। आपका बहुत दिनों से कुशल पत्र नहीं आया सो देना। स्वाध्याय म प्रवृत्ति रखने का ख्याल न भूलिये आनवक्त ५ बजे से ६ बजे तक प्रात काल का समय सामायिक स्वाध्याय के लिये रखिये। हाथ पैर धोकर सामायिक स्वाध्याय कर सकते हैं। स्नान पश्चात् कर सकते हैं। किसी दिन अशुचि हो जाए तब कपड़ा बदल कर कर सकते हैं। स्वाध्याय म प्रमाद न करना। आत्मा का स्वभाव ज्ञान है उसके विकास का यत्न रखना। परिवार को धर्मवृद्धि। बच्चों को आशीर्वाद।

६-८-४४

आ० शु० चि०
मनोहर लाल वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई जी महावीर प्रसाद जी योग्य धर्मवृद्धि।

आपका पत्र आया स्वास्थ्य व धर्मसाधन ठीक चल रहा होगा। हमारा स्वास्थ्य ठीक है। आपका स्वाध्याय सामायिक ठीक चलरहा होगा। ज्यों ज्यों दिन व्यतीत होते जाते मनुष्य की आयु भी घटती जाती है। ससार के किसी पदार्थ में आत्मा का सुख नहीं है। यह सारा समागम धोखा है अपने आत्मा की खबर लेना सबसे उत्तम काम है। सो सामायिक स्वाध्याय व छहढाला की ढालें पढ़ना व आत्मा कीर्तन का मनन करना इतनी बात कभी नहीं छोड़ना चाहें बाहर जावें तो वहा भी करना चाहे कम करसको

रह रह तो व्यापार के लिये नियत समय रखना ६ घंटा [illegible]
फिर जैसा समझो प्रात: १॥ घंटा या १ घंटा निजी [illegible]
अवश्य लगाना शेष धर्मध्यान जैसा करते हो करते रहना। [illegible]
चमनलाल जी आदि सब से धर्म में धर्मवृद्धि कहना—

रफीगंज [illegible]
१-३-४४ [illegible]

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई मूलचन्द जी योग्य धर्मवृद्धि।

परंच – हमारा पत्र व आपकी शंकाओं के [illegible]
पहुँचा होगा – ज्ञान गोष्ठी में १५–२० मिनट की [illegible]
आध्यात्मिक रस लेना, कठिन हो कई बार पढ़ने से [illegible]
है। अध्यात्मचर्चा छप गई है उसे ज्ञानगोष्ठी में [illegible]
पानस्थानचर्चा छप गया है उसभी आप एक बार [illegible]
समरथानमूल निश्चय स्पष्ट छप गया है उस [illegible]
को करना। अस्तु

भाई मूलच[illegible] जी तुम दुकान आदि [illegible]
पर करना ऐसा आराम बनाना जिससे तुम्हें [illegible]
समय स्वाध्याय के लिये मिल सके [illegible]
जैसे १ घंटा सूर्योदय से १॥ घंटा पूर्व [illegible]
मिनट शास्त्रसभा में। रात को १॥ घंटा [illegible]
घंटा सभा को धर्मशिक्षा भी दे सकते हो। [illegible]
जी आदि बंधुओं को यथायोग्य [illegible]
उपाय कर लेना मनुष्यभव पाने का [illegible]

श्रीयुत बा० आनन्द प्रकाश जी जैन।

योग्य धर्मवृद्धि।

पत्र—आपका स्वास्थ्य व धर्मसाधन ठीक चल रहा होगा। आपका बहुत दिनों से कुशल पत्र नहीं आया सो देना। स्वाध्याय में प्रवृत्ति रखने का ख्याल न भूलिये आजकल ५ बजे से ६ बजे तक प्रातः काल का समय सामायिक स्वाध्याय के लिये रखिये। हाथ पैर धोकर सामायिक स्वाध्याय कर सकते हैं। स्नान पश्चात् कर सकते हैं। किसी दिन अशुचि हो जावे तब कपड़ा बदल कर कर सकते हैं। स्वाध्याय में प्रमाद न करना। आत्मा का स्वभाव ज्ञान है उसके विकास का यत्न रखना। परिवार को धर्मवृद्धि। बच्चों को आशीर्वाद।

६-८-४४

आ० शु० चि०
मनोहर लाल वर्णी

卐 卐 卐

श्रीयुत भाई जी महावीर प्रसाद जी योग्य धर्मवृद्धि।

आपका पत्र आया स्वास्थ्य व धर्मसाधन ठीक चल रहा होगा। हमारा स्वास्थ्य ठीक है। आपका स्वाध्याय सामायिक ठीक चलरहा होगा। ज्यों ज्यों दिन व्यतीत होते जाते मनुष्य की आयु भी घटती जाती है। संसार के किसी पदार्थ में आत्मा का सुख नहीं है। यह सारा समागम धोखा है अपने आत्मा की खबर लेना सबसे उत्तम काम है। सो सामायिक स्वाध्याय व छहढाला की ढालें पढ़ना व आत्मा कीर्तन का मनन करना इतनी बात कभी नहीं छोड़ना चाहे बाहर जावें तो वहां भी करना चाहे कम करसको

कुछ परवाह नहीं। किसी भी प्रसग पर कोई चिन्ता नहीं करना, आत्मा तो भगवान् के स्वभाव समान है बाह्य पदार्थों के आश्रय क्या चिन्ता करना। सब समाचार देना। धरम की तबियत आदि का हाल भी लिखना वह बहुत भद्र प्रकृति की है। आप दोनोंमें सम्यग्ज्ञान की वृद्धि हो और सत्पुरुष का मार्ग पावें। श्री भाइ सुमतिप्रसाद जी दालमंडीवाले को धर्मवृद्धि कहना। श्री प बिहारीलाल जी को धर्मवृद्धि कहना।

आ॰ शु चि॰
मनोहरलाल वर्णी

卐 卐 卐



वी॰ के॰ रस्तोगी के प्रबन्ध से ... प्रेस में मुद्रित।